आर.एन.आई. नं. 3653/57 डाक पंजीयन संख्या JPC/3825/02/2003-05

हिन्दी मासिक

जिनवाणी

श्री नमस्कार महामन्त्र

णमो अरिहंताणं
णमो सिद्धाणं
णमो आयरियाणं
णमो उवज्झायाणं
णमो लोए सव्वसाहूणं ॥
एसो पंच णमोक्कारो,
सव्व-पावप्पणासणो,
मंगलाणं च सव्वेसिं,
पढमं हवइ मंगलं ।

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल जयपुर

वर्ष 60 अंक 2
फरवरी, 2003 माघ, 2059

स्नेह का स्वर्णिम नजराना

सर्वगुणसंपन्न अलंकारों का
स्नेह एवं विश्वास का स्वर्णिम बंधन
रतनलाल सी. बाफणा ज्वेलर्स
जहाँ सोने की गुणवत्ता भी है
और आभूषणों की
विशाल मात्रा में विविधता भी है ।
स्वर्णिम सौंदर्य संस्कृति की
अद्वितीय विशेषताएँ
स्वर्ण आभूषणों की हरदम
नई कलात्मक वेरायटी ।
रेडी स्टॉक में अलंकारों के
अनगिनत प्रकार ।
भाव एवं मजूरी वाजिब ।
आभूषणों की 'वापसी विश्वसनीयता'
स्पष्ट रूप में आभूषणों पर मुद्रांकित ।
'वापसी' दी हुई गारंटीनुसार
चालू भाव से ५० रु.
कम भाव से लेने का वचन ।
हर समाज के विशिष्ठ परम्परानूरूप
गहने उपलब्ध ।
हीरों के आभूषण एवं चांदी बर्तनों की
नई विशाल मालिका ।
केवल स्वनिर्मित
(R.C.) अलंकारों की बिक्री ।
ज्वेलरों के लिए होलसेल बिक्री सुविधा ।
स्पष्ट व स्वच्छ बातचीत
एवं विनयशील व्यवहार ।.
पधारिये!
जहाँ विश्वास ही परम्परा है।

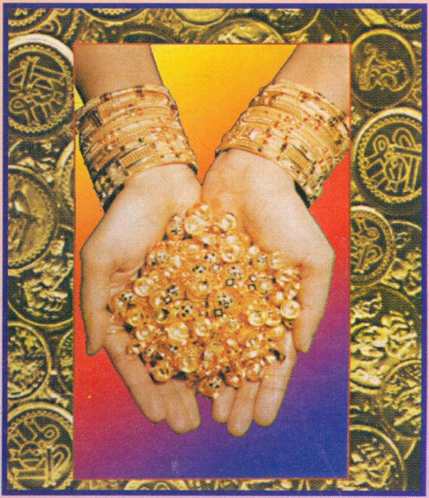

रतनलाल सी. बाफना, ज्वेलर्स

पारस महल
चांदी बर्तन शोरुम
'शुद्ध आहार शाकाहार'

सुभाष चौक, जलगाँव
दूरभाष : २२३९०३, २२५९०३,
२२२६२९, २२२६३०

नयनतारा
स्वर्णालंकार शोरुम
डायमंड शोरुम
(रविवार अवकाश)

चेतावनी : हमारी कहीं भी शाखा एवं एजंट नहीं!

जिनवाणी हिन्दी-मासिक

मंगल-मूल, धर्म की जननी, शाश्वत सुखदा कल्याणी।
द्रोह-मोह-छल-मान-मर्दिनी, फिर प्रगटी यह 'जिनवाणी'

● **प्रकाशक**
प्रकाशचन्द डागा
मंत्री-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
दुकान नम्बर 182-183 के ऊपर, बापू बाजार,
जयपुर-302003 (राज.), फोन नं. 2565997

● **संस्थापक**
श्री जैन रत्न विद्यालय, भोपालगढ़

● **सम्पादक**
डॉ. धर्मचन्द जैन, एम.ए., पी-एच.डी.

● **सम्पादकीय सम्पर्क-सूत्र**
3 K 24-25, कुड़ी भगतासनी हाउसिंग बोर्ड
जोधपुर- 342005(राज.)
फोन नं. 0291-2730081

● **सम्पादक मण्डल**
डॉ. संजीव भानावत, एम.ए. पी-एच.डी.

● **भारत सरकार द्वारा प्रदत्त**
रजिस्ट्रेशन नं. 3653/57
डाक पंजीयन सं. JPC/3825/02/2003-05

● **सदस्यता**

स्तम्भ सदस्यता	11000 रु.
संरक्षक सदस्यता	5000 रु.
आजीवन सदस्यता देश में	500 रु.
आजीवन सदस्यता विदेश में	100$(डालर)
त्रिवर्षीय सदस्यता	120 रु.
वार्षिक सदस्यता	50 रु.
इस अंक का मूल्य	10 रु.

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

दिगिंछा-परिगए देहे,
तवस्सी भिक्खू थामवं।
न छिंदे न छिंदावए,
न पए, न पयावए।।
—उत्तराध्ययन सूत्र २.२

क्षुधा व्याप्त होने पर तन में,
तपसी मुनि साहस दिखलाए।
फल-मूलादिक छेदन पाचन,
स्वयं करे, ना करवाए ।।२।।

फरवरी 2003
वीर निर्वाण सं. 2529
माघ, 2059

वर्ष : 60 **अंक** : 02

मुद्रक : दी डायमण्ड प्रिण्टिंग प्रेस, मोतीसिंह भोमियों का रास्ता, जयपुर, फोन: 2562929

ड्राफ्ट 'जिनवाणी' जयपुर के नाम बनवाकर प्रकाशक के उपर्युक्त पते पर प्रेषित किया जा सकता है।

नोट: यह आवश्यक नहीं कि लेखकों के विचारों से सम्पादक या मण्डल की सहमति हो।

विषयानुक्रमणिका

प्रवचन/निबन्ध

ऋषि–परम्परा और आचार्य श्री आनन्दऋषि जी म.सा.	: आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा.	8
मैत्री भावना	: उपप्रवर्तक डॉ. राजेन्द्र मुनि	22
राग–द्वेष	: श्री श्रीकृष्णमल लोढ़ा	25
ईर्ष्या का दंश	: आचार्य श्री विजयरत्नसुन्दरसूरि जी	28
हांगकांग में बढ़ती धार्मिक रुचि	: श्री जितेन्द्र डागा	39
संतोष और महत्त्वाकांक्षा का संबंध	: श्रीमती विमला जोटा	43
सत्य के शत्रु : भय और आस	: पूर्व कर्नल दलपतसिंह बया	46
विचारों का प्रभाव	: श्री प्रकाशचन्द लोढ़ा	50
दहेज से परहेज क्यों?	: श्री गजमल लोढ़ा	56

विचार/प्रश्नमंच/आगम–परिचय

अमृत–वचन	: आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा.	6
स्थानीय धार्मिक शिक्षण–शिविर	: श्री महेश नाहटा	24
त्याग	: श्री पी.एम. चोरड़िया	35
दशवैकालिक सूत्र (4)	: डॉ. अमृतलाल गाँधी	48
आचार्य हस्ती के अनमोल वचन	: सौ. कमला सिंघवी	56

कथा/कविता/प्रेरक–प्रसंग

ऐसा अपना घर हो	: मधुरव्याख्यानी श्री गौतममुनि जी म.सा.	7
जवानी का जोर–शोर	: श्री अनराज बोथरा	21
सफलता का रहस्य	: श्री दिलीप जैन	27
सह अस्तित्व	: श्री प्रकाश गुन्देचा	38
सोडियम	: श्री दिलीप धींग	45
दौड़	: श्री अशोक बोहरा	49
सत्य की ही जीत सदा	: श्री लालचन्द जैन	52

स्तम्भ/ अन्य

सम्पादकीय	: संकलित	3
साहित्य–समीक्षा	: संकलित	57
समाचार-संकलन	: संकलित	59
संक्षिप्त समाचार	: संकलित	67
बधाई / चुनाव	: संकलित	69
श्रद्धांजलि	: संकलित	69
साभार–प्राप्ति–स्वीकार	: संकलित	72
जिनवाणी पर अभिमत	: संकलित	74

प्राकृतिक आपदा और मानव

डॉ. धर्मचन्द जैन

गतवर्ष गुजरात में भूकम्प की त्रासदी थी। इस वर्ष राजस्थान सहित कई प्रान्तों में वर्षा पर्याप्त नहीं होने से अकाल है। अकाल के कारण पशु- पक्षियों एवं वन्य प्राणियों का जीवन संकट में है। मनुष्य को भी जीने की व्यवस्थाओं में कठिनाई का अनुभव हो रहा है।

अकाल, बाढ़, भूकम्प आदि ऐसी प्राकृतिक आपदाएँ हैं, जिनमें जीवजगत् की अकल्पित हानि संभव है। भूकम्प में एक साथ कई शहर एवं गांव धराशायी हो जाते हैं। भवनों एवं अट्टालिकाओं के मलबे में वहाँ के निवासी अपनी जान गँवा बैठते हैं। पेड़ों के धराशायी हो जाने से पक्षियों के आश्रय उजड़ जाते है। पशुओं एवं वन्य प्राणियों के जीवन पर भी कहर बरप जाता है। बाढ़ भी महाविनाश का कारण बनती है। न चाहते हुए भी धन-जन की सम्पदा बह जाती है। देखते-देखते विनाशलीला होती रहती है, उसे रोक पाना हाथ में नहीं होता। अकाल में खाद्य-सामग्री के अभाव से प्राणिजगत के प्राण संकट में पड़ जाते हैं। पशुओं के लिए चारा नहीं, पानी नहीं तो वे कैसे जी सकेंगे? मानव के लिए भी अनाज एवं जल उपलब्ध नहीं, तो उसका भी जीवन खतरे में है।

जब-कभी प्राकृतिक आपदाएँ आती हैं तो उनसे निपटने हेतु सबसे बड़ा दायित्व मानव पर आता है। क्योंकि वही अधिक समर्थ एवं विवेकशील है। अन्य प्राणियों से इन आपदाओं में किसी सहयोग की अपेक्षा नहीं की जा सकती। मानव ने इस दायित्व को समझा है, उसमें बुद्धि है एवं सहयोग की क्षमता है। सरकार भी इसमें योगदान करना अपना कर्त्तव्य समझती है तो अनेक स्वयंसेवी संस्थाएँ एवं व्यक्ति भी इस कार्य में आगे आते हैं। आपदाओं से त्रस्त मानवजाति एवं प्राणिजगत् को अभयदान एवं पुनः स्थापन का दायित्व प्रत्येक व्यक्ति का है।

जैनधर्म में अनुकम्पा, दान-धर्म, मैत्री, वैयावृत्त्य आदि का निरूपण हमें इन प्राकृतिक आपदाओं में अपने कर्त्तव्य का बोध कराता है। भगवान महावीर ने मुख्यतः दुःखमुक्ति का उपदेश दिया, किन्तु उनका उपदेश समस्त जीवों की रक्षा एवं दया (सव्वजगजीवरक्खणदयट्ठयाए) के लिए था। भगवान महावीर ने पृथ्वीकाय, अप्काय, तेजस्काय, वायुकाय, वनस्पतिकाय एवं त्रसकाय के जीवों की हिंसा के निषेध का उपदेश मात्र अपने कर्म-बन्धनों को रोकने के लिए नहीं दिया, अपितु उन जीवों की जीने की अभिलाषा समझकर उनके प्रति आत्मभाव प्रकटाने के लिए दिया।

मानव एक संवेदनशील प्राणी है। संवेदनशील प्राणी अन्य प्राणियों के कष्ट को देखकर द्रवित न हो, यह सम्भव नहीं है। बृहत्कल्पभाष्य में कहा है-

जं इच्छसि अप्पणत्तो
जं न इच्छसि अप्पणत्तो।
तं इच्छ परस्स वि
एत्तियगं जिणसासणं।।

जो तुम अपने लिए चाहते हो और जो तुम अपने लिए नहीं चाहते है- उसी प्रकार दूसरों के संबंध में भी चाहो-यही जिनोपदेश है। जिस प्रकार तुम्हें जीवन प्रिय है, सुख प्रिय है उसी प्रकार अन्य प्राणियों को भी जीवन प्रिय है एवं सुख प्रिय है तथा जिस प्रकार तुम्हें मृत्यु अप्रिय है, दुःख अप्रिय है उसी प्रकार अन्य प्राणियों को भी मृत्यु एवं दुःख अप्रिय हैं। आचारांग सूत्र में स्पष्ट कथन है-**सव्वे पाणा पियाउआ सुहसाया दुक्खपडिकूला, अप्पियवधा पियजीविणो जीविउकामा। सव्वेसिं जीवितं पियं।।**

अर्थात् सभी प्राणियों को आयुष्य प्रिय है, सबको सुख साताकारी एवं दुःख प्रतिकूल लगता है, सबको वध अप्रिय एवं जीवन प्रिय है, सभी जीव जीने की इच्छा रखते हैं। आचारांग का यह सूत्र सभी प्राणियों की अभिलाषा का आदर करने की प्रेरणा करता है। हम दूसरे प्राणियों की हिंसा न करें, उन्हें पीड़ा न पहुँचाएँ, यह तो अनिवार्य है ही, किन्तु उनके सुख-दुःख में भी सहयोगी बनें यह भी आवश्यक है। भगवान महावीर ने यह कभी नहीं कहा कि अन्य प्राणियों की उपेक्षा करो। उन्होंने तो सभी प्राणियों को अपने समान समझने का उपदेश दिया है।

'आयतुले पयासु' का भाव सृष्टि के समस्त जीवों के प्रति प्रकट हो, तभी मैत्री कायम हो सकेगी। कहा है-

मैत्रीभाव जगत् में मेरा सब जीवों से नित्य रहे।
दीन दुःखी जीवों पर मेरे उर से करुणा स्रोत बहे।।

प्रतिक्रमण में भी बोलते हैं-

मित्ती मे सव्वभूएसु, वेरं मज्झ न केणई।।

सभी जीवों के प्रति मेरा मैत्रीभाव है, किसी के भी साथ मेरा वैर नहीं है।

दुःखी एवं संत्रस्त जीवों पर अनुकम्पा करना सम्यक्त्व का एक लक्षण है। व्यवहार सम्यक्त्व के पाँच लक्षणों में अनुकम्पा को भी स्थान दिया गया है। साधु-साध्वी अनुकम्पा का अपनी मर्यादा में रक्षण करते हैं, किन्तु सद्गृहस्थ श्रावक-श्राविका का क्रियात्मक पक्ष प्रतिबन्धित नहीं है। दुःखियों के दुःख को अपना दुःख समझने से अपने दुःख में कमी आती हैं, राग विगलित होता है, संकीर्णता टूटती है तथा मैत्रीभाव एवं आत्मीयता का विकास होता है।

जैनधर्म में दान की प्रवृत्ति का भी इस दृष्टि से विशेष महत्त्व है। दीक्षा अंगीकार करने के पूर्व तीर्थंकर भी नियमित दान करते रहे हैं। दान के दो फल हैं- अपनी आसक्ति एवं परिग्रह में कमी तथा अन्य को सम्बल। यह प्रवृत्ति संघ, समाज एवं मानवजाति को जोड़ती है।

तत्त्वार्थसूत्र में जीवों का कार्य परस्पर उपग्रह/उपकार प्रतिपादित करते हुए कहा गया है- परस्परोपग्रहो जीवानाम् (तत्त्वार्थ सूत्र) एक दूसरे का सहयोगी बनना जीवों का कार्य है। प्राकृतिक रूप से भी जीव एक-दूसरे के सहयोगी होते हैं। सहयोग किस प्रकार का हो, यह चिन्तनीय है। एक दूसरे को हानि पहुंचाने का कार्य भी जीव कर सकते हैं, दुष्कृत्य में भी मददगार बन सकते हैं, किन्तु विवेकशील और धर्मनिष्ठ मानव से यह अपेक्षित नहीं है। वह अन्य प्राणियों की जीवन-रक्षा एवं उनकी सत्प्रवृत्तियों में ही सहयोगी बनता है।

कष्ट के समय जैन राजाओं, मन्त्रियों, श्रेष्ठियों एवं कार्यकर्त्ताओं ने सदैव खुले मन से सहयोग किया है। आज अनेक जैन संस्थाएँ, श्रेष्ठी एवं कार्यकर्ता इस दिशा में सन्नद्ध हैं तथा देश में अग्रणी भूमिका का निर्वाह कर रहे हैं। लाखों-करोड़ों ही नहीं अरबों-खरबों का सहयोग जैन समाज कर रहा है। यह इस समाज के सत्संस्कारों का परिणाम है।

धन-सम्पदा हमने कमायी है, किन्तु उसके साथ हमारा नाता कितने वर्षों का है? या तो वह हमें छोड़ देगी या हम उसे छोड़ देंगे। इसलिए सत्प्रवृत्तियों में उसका सदुपयोग ही अवसर का तकाजा है।

जैनधर्म के सिद्धातों पर यदि चला जाय तो प्राकृतिक आपदाएँ भी कुछ अंशों में नियन्त्रित हो सकती हैं। प्रकृति का उजाड़ करने, उसके साथ खिलवाड़ करने, उसका परिस्थितिक सन्तुलन बिगाड़ने से प्राकृतिक आपदाओं की आवृत्ति बढ़ती है। यदि मानव प्रकृति का विनाश न करे और जैनधर्म के सिद्धान्तों पर चले तो काफी अंशों में इन आपदाओं को नियन्त्रित किया जा सकता है। किन्तु फिर भी प्राकृतिक आपदाएँ आती हैं तो भयभीत होने की आवश्यकता नहीं है, बल्कि पूर्ण विश्वास, सामर्थ्य एवं विवेक के साथ उन प्राणियों के प्राण बचाने में जुट जाना चाहिए।

राजस्थान में इस वर्ष अकाल की परिस्थितियों में कई क्षेत्रों में जल एवं भोजन का अभाव है, सरकार एवं स्वयंसेवी संस्थाएँ इस ओर अपना योगदान कर रही हैं। राजस्थान पत्रिका के द्वारा 'एक मुट्ठी अनाज योजना' के माध्यम से कई गांवों में अन्न पहुंचाया जा रहा है। केन्द्र सरकार के पास पर्याप्त भण्डार है, किन्तु सही स्थान पर पहुंचाने एवं वितरण की समस्या है। सबसे बड़ी समस्या पशु-पक्षियों के रक्षण की है। प्राणिमित्र संस्थान, जोधपुर इस दिशा में हजारों पशुओं को चारा उपलब्ध कराने का भरसक प्रयास कर रहा है। जिसका जैसा सामर्थ्य है, उसे इस दिशा में अपनी शक्ति का उपयोग करना चाहिए।

करुणा मानव का शृंगार है। करुणाहीन या संवेदनाशून्य मनुष्य किसी काम का नहीं। वह न अपना कल्याण कर पाता है और न ही किसी अन्य का। मानव ही वह प्राणी है जो आपदाओं की परिस्थितियों में भी कुछ कर सकता है। ●

अमृत - वचन

आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा.

- महावीर ने मार्ग बताया कि अपना खयाल रखकर, अपनी चोटी पहले पकड़कर, खुद सुधरते हुए संसार का सुधार करो।
- यदि दूसरों को देखकर तालियाँ बजाते रहेंगे और घर में करने-कराने को कुछ भी नहीं है तो वास्तव में समाज का कोई गौरव नहीं होगा।
- सद्गृहस्थ वह है जो सत्पात्र को रोज दान देवे।
- देव-भक्ति, गुरु-सेवा, स्वाध्याय, संयम, तप और दान-ये गृहस्थ के षट् कर्म बताये गये हैं।
- आपका दान जनता की नजर में जल्दी आ सकता है, लेकिन साधु का दान देखने में नहीं आता।
- नाम के भूखे महानुभाव ज्यादा हैं, और काम करने के कम।
- यदि दान का उचित उपयोग करें तो समाज में देने वालों की कमी नहीं है।
- आप द्रव्य का त्याग करेंगे तो ममता घटेगी। दूसरी बात समाज में त्याग की परिपाटी कायम रहेगी। तीसरी बात त्याग करने से समाज दुर्बल और पराश्रित नहीं रहेगा, अपने पैरों पर खड़ा रह सकेगा।
- जैन धर्म जैसा ऊँचा धर्म पाकर आप पिछड़े रह गये, तो इससे ज्यादा कोई आश्चर्य की बात नहीं होगी।
- मुझे ताज्जुब है कि जैन धर्म के क्षीर समुद्र में रह कर हजारों लोग प्यासे क्यों रह गये? जैन धर्म जैसा विशाल धर्म पाकर भी आप लोग विषय-कषायों में दबे कैसे रह गये?
- द्रव्य-दया से ही जैन धर्म ऊँचा नहीं उठेगा, द्रव्य-दया के साथ-साथ भाव-दया भी करें।
- जैसे नमक के बिना भोजन अच्छा नहीं लगता है, उसी तरह द्रव्य-दया के साथ भाव-दया भी आवश्यक है।
- आप चाहे तप कीजिये, दया कीजिये, शीलव्रत धारण कीजिये, दान दीजिये, जो कुछ भी कीजिये निष्कपट भाव से, सरल मन से कीजिये। ऐसा नहीं हो कि मन में कुछ और है और बाहर कुछ और।

ऐसा अपना घर हो

(तर्ज-उड़ते पंछी नील गगन में..........)

मधुर व्याख्यानी श्री गौतममुनि जी म.सा.

(पावटा स्थानक, जोधपुर में तीन सप्ताह पर्यन्त घर की अन्तः सुन्दरता पर प्रवचन फरमाते समय परिवार में विनय, विवेक, प्रेम, समन्वय, सौहार्द, सहयोग, सहनशीलता, सेवा, अनुशासन आदि अनेक गुणों की सौरभ के प्रसार हेतु अपने मुखारविन्द से प्रस्तुत अद्भुत प्रेरक रचना।)

गुण सौरभ से रहे महकता, जहाँ जीवन सुखकर हो,
ऐसा अपना घर हो....।।

कथनी करनी रहे एक सी, नहीं जिसमें अंतर हो,
ऐसा अपना घर हो....।।

विनय विवेक की नींव हो जिसमें, प्रेम प्यार की छत हो,
रहे मधुर व्यवहार सभी से, वचनों में अमृत हो,
सहनशीलता का हो आंगन, कटुता का न जहर हो,
ऐसा अपना घर हो....।।

उस घर में मजबूत बनें, विश्वास की सब दीवारें,
कठिन घड़ी में बन जाए सब, एक दूजे के सहारे,
खिड़की हो अनुशासन की तो, विघटन का न असर हो,
ऐसा अपना घर हो....।।

मर्यादा की चार दिवारी, में सब मर्यादित हो,
सादा जीवन उच्च विचारों, से सब ही प्रमुदित हों,
बड़े जनों का हो आदर और, छोटों पर भी महर हो,
ऐसा अपना घर हो....।।

सेवा और सहयोग का जिसमें, हो दरवाजा सुन्दर,
चित्र नहीं चारित्र की पूजा, हो जिस घर के अन्दर,
धर्म के सन्मुख रहे सदा सब, पापों से जहाँ डर हो,
ऐसा अपना घर हो....।।

स्वच्छ आचरण की हो बहारें, ज्ञान प्रकाश हो पूरा,
मोक्ष लक्ष्य की सीढ़ी हो तो, काम रहे न अधूरा,
'गौतम' से प्रभु फरमाते हैं, अब तो शाश्वत घर हो,
ऐसा अपना घर हो....।।

ऋषि-परम्परा और आचार्य श्री आनन्दऋषि जी

आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा.

श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सम्प्रदाय में लोकाशाह के पश्चात् ऋषि-सम्प्रदाय का भी महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। पूज्य लवजीऋषि इस सम्प्रदाय के मूल नायक थे। श्रद्धेय आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. ने श्रमण संघ के द्वितीय पट्टधर आचार्यप्रवरश्री आनन्दऋषि जी म.सा. के 103वें जन्म-दिवस श्रावण शुक्ला प्रतिपदा संवत् 2059 के अवसर पर बालकेश्वर (मुम्बई) चातुर्मास में 10 अगस्त 2002 को जो प्रवचन फरमाया वह ऋषि-परम्परा एवं आचार्य श्री आनन्दऋषि जी के जीवन-दर्शन पर तो प्रकाश डालता ही है, किन्तु साथ ही आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के उदार दृष्टिकोण एवं विशाल गुणग्राही हृदय का भी निदर्शन है। यदि स्थानकवासी सम्प्रदायों में इस प्रकार का दृष्टिकोण हो तो कहीं संघर्ष, कलह एवं विवाद को अवकाश ही न हो। इस प्रभावी प्रवचन का आशुलेखन श्री नौरतन जी मेहता, जोधपुर ने किया है।

-सम्पादक

तीर्थंकर भगवन्त महावीर की आदेय-अनमोल वाणी में साधना करने वाले पुरुषों के चार विकल्प बताए गए हैं-

"चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता तंजहा सीहत्ताए णाममेगे निक्खंते सीयालत्ताए विहरइ। सीयालत्ताए णाममेगे णिक्खंते सीहत्ताए विहरइ। सीयालत्ताए णाममेगे निक्खंते सीयालत्ताए विहरइ। सीहत्ताए णाममेगे णिक्खंते सीहत्ताए विहरइ।"

कोई-कोई पुरुष साधना में बड़े जोश-खरोश के साथ चरण बढ़ाकर निकलते हैं। वे जानते हैं घर में रहते पाप होता है। घर में आरम्भ-समारम्भ है, झंझट है, प्रपंच है, दुःख ही दुःख है। इसलिये "सीहत्ताए णाममेगे णिक्खंते।" वे सिंह की तरह पराक्रमशील बनकर निकलते हैं, पर भक्तों के राग में पड़कर सियार की तरह आचरण करने वाले बन जाते हैं। जीवन में एक-एक छूट का अवलम्बन लेकर, एक-एक आगार को पकड़कर, एक-एक कमजोरी का सहारा लेकर अपने संयम जीवन में अनपढ़, रागी, अगीतार्थ श्रावकों के कहने से नीचे उतरते जाते हैं।

कोई-कोई ऐसे हैं जो निकलते हैं दुःख से, निकलते हैं अभाव से, अभियोग से। निकलते समय उनके वैराग्य का रंग वैसा नहीं होता, पर जब संतों की चरणसेवा में आते हैं, साधना का मार्ग पकड़ते हैं, साधुत्व की महिमा समझते हैं तो अपनी कमजोरी हटाकर सिंह की तरह विचरण करने लग जाते हैं। कोट्यधिपति परिवार में कभी संतों का गोचरी के लिये पधारना हुआ, घर के मालिक ने उदारभाव से विशिष्ट पदार्थ बहराने का प्रयास किया। पास खड़े नौकर ने सोचा- मैं रोज मांगता हूँ, मांगने पर भी मिलता नहीं और ये महाराज

ना-ना करते हैं, फिर भी इनको सेठ बहराता जाता है। महाराज का जीवन बहुत अच्छा है, मुझे भी महाराज बन जाना चाहिये।

वह वैरागी कैसे बना? उसने अच्छा खाने के लिए साधु बनना स्वीकार किया। साधु बनाने के लिए उसने गुरु से निवेदन किया तो गुरु ने कहा-हम एक शर्त पर तुझे साधु बना सकते हैं।

पूछा- गुरुदेव बताइये, क्या शर्त है?

गुरु ने कहा- हमारे यहाँ साधु के दो काम मुख्य हैं। एक है- सेवा और दूसरा है- स्वाध्याय। तूं अगर पाँच गाथाएँ रोज याद करने की हाँ भरता है तो तुझे दीक्षा दी जा सकती है।

गुरुदेव! मैं पाँच गाथाएँ रोज याद करके सुना दूँगा।

वह दीक्षित हो गया और प्रतिदिन पाँच गाथाएँ याद करके सुनाता रहा। पढ़ते-पढ़ते और याद करते-करते जब उत्तराध्ययन सूत्र का सतरहवाँ अध्ययन पढ़ने लगा तो उसमें एक गाथा आई कि साधु अगर रोज दूध, दही, घी, तेल और मीठा खाता है तो वह पाप श्रमण है। गाथा पढ़ी, अर्थ समझा और विचार करने लगा- गजब हो गया, मैं घर छोड़कर आया, साधु बना और साधु बनकर भी पाप श्रमण रहूँ, यह तो ठीक नहीं। वह गुरु के श्रीचरणों में आकर निवेदन करता है- गुरुदेव! मुझे पाँचों विगयों का जीवन पर्यन्त त्याग करवा दीजिये।

ऐसे-ऐसे त्यागी संत भी होते हैं। इस रत्नवंश में तपस्वी ताराचन्द्र जी महाराज भी ऐसे ही महान् साधक हुए हैं, जिन्होंने साधु बनने के बाद जीवन भर तक एक भी विगय का सेवन नहीं किया। तेरह साल के संयम में उन्होंने बेले-बेले पारणा किया और पारणे में विगय का सेवन नहीं किया। छाछ-खाखरे से पारणा कर लिया, छाछ में राख घोलकर पी ली, पर विगय का सेवन नहीं किया। आप ताज्जुब करेंगे राख घोलकर कैसे पी जाती है? राख बहुत उपयोगी है। आप जैसे पारणे में केर का पानी लेते हैं, मेथी का पानी लेते हैं ऐसे ही राख पेट की सफाई करती है।

मैं उस व्यक्ति की बात कह रहा हूँ जो सियार की तरह से संत बना था, पर साधना मार्ग में सिंह की तरह पराक्रम कर दिखाया। एक-एक ऐसे होते हैं जो सियार की तरह दीक्षा लेते हैं, सियार की तरह पालते हैं और एक-एक ऐसे हैं जो सिंह की तरह दीक्षा लेकर सिंह की तरह पालते हैं।

मैं आज जिनकी बात कहने जा रहा हूँ, वह मुझे कल कहनी थी,पर आचार्य पूज्य श्री शोभाचन्द्र जीं महाराज के गुणों का वर्णन करते-करते कल

आचार्य पूज्य आनन्दऋषि जी महाराज के जन्म-दिवस के प्रसंग में कुछ कह नहीं पाया। आज ऋषि परम्परा का परिचय रखते हुए आचार्यप्रवर पूज्य आनन्दऋषि जी महाराज के संदर्भ में अपनी बात रखने का प्रयास करूंगा।

कहा जाता है कि वि.सं. १६४६ में अहमदाबाद में महाराजा जसवन्तसिंह जी का राज्य चलता था। सूरत का एक सामान्य व्यापारी वीरजी बोरा एक वैष्णव भाई के वहाँ काम करता था। वीरजी जिनके वहाँ काम करता था, उनके पास काफी सम्पत्ति थी। पुराने प्रतिष्ठित परिवारों में गायें-भैंसे रहा करती थीं। आज आपके घरों में रंग-बिरंगी कारें मिलती हैं वैसे पहले अनेक घरों में गायें मिलती थीं। गायें-भैंसे थी तो दूध भी पर्याप्त मात्रा में होता। वीरजी को अन्य-अन्य कामों के साथ सेठ ने एक काम और दे रखा था, जिसके अनुसार वह घड़ा भर दूध रोज बलदानी कोठी के पास से होकर पश्चिम दिशा में रांधेर ग्राम के रास्ते जहाँ तापी नदी निकलती है, नदी में दूध डालने जाया करता था। एक दिन वीरजी को रास्ते में एक फन फैलाया सांप मिला। सर्प देखकर वीरजी के पांव वहीं रुक गये, आगे बढ़ने की हिम्मत नहीं हुई। थोड़ी देर दूर खड़े-खड़े देखा, सांप जहाँ का तहाँ है तो सोचा शायद साँप भूखा है। दूध का घड़ा साथ में था ही, उसे नदी में न डालकर सांप के आगे रख दिया और खुद पीछे हट गया। सांप आया और घड़ा खाली कर दिया। वीर जी घड़ा लेकर लौटने को तत्पर होने को था कि सांप मार्ग अवरुद्ध कर सामने आ गया। सांप ने अपना फण फैलाया और फण से इशारा किया कि इधर चलो। जानवर बोल तो नहीं सकता, किन्तु इशारे से कुछ कहना चाहता है, ऐसा प्रतीत जरूर होता है। वीर जी ने सोचा-मैंने सांप का कुछ बिगाड़ा नहीं, उसे कष्ट भी नहीं पहुंचाया, मैंने दूध पिलाया है तो यह सांप मुझे डसेगा तो नहीं। वीर जी कुछ आश्वस्त हुआ और वहीं खड़ा हो गया। सांप नजदीक आता है। पहले फण का इशारा किया, अब धोती पकड़ कर इशारा करता है कि इधर चलो।

असमंजस की स्थिति थी। वीरजी ने थोड़ी हिम्मत की और वह चल पड़ा। सांप आगे चल रहा था, पीछे वीरजी थे। चलते-चलते सांप नदी के किनारे जा पहुंचा जहाँ एक शिला थी। सर्प उस शिला के किनारे से भीतर घुसा और मुँह बाहर निकाला। वह वीरजी को इशारा करके नीचे आने का संकेत कर रहा था। मैं यह कल्पना से नहीं, आपके सामने इतिहास की घटना रख रहा हूँ।

वीरजी बोरा में अब उतना भय नहीं रहा। क्योंकि वह जान गया था कि सांप को काटना होता तो कभी का काट जाता। शिला की तरफ बार-बार संकेत को देखकर वीरजी ने शिला हटाई। शिला हटते ही एक भंवरा सा दीखा।

दिल कड़ा करके बोरा जी ने अन्दर झांका तो वहाँ पर सोना-चांदी-रत्नों का ढेर जैसी अपार धनराशि दिखाई दी। सांप मणिधर था। सांप ने अपनी मणि से प्रकाश किया। सांप बोरा जी के समीप आता है, उनके चारों ओर आंटा जैसा लगता है, छत्र करता है। सांप मानो कह रहा था कि अब तक इस धन को मैंने संभाला है, अब तुम संभालो।

पुण्यशालिता जगती है, तब ऐसे धन मिलता है। राजस्थानी भाषा में कहूँ- तकदीर हो तो छप्पर फाड़कर धन मिलता है। बोराजी धन पाकर कोट्यधिपति बन गया। कहते हैं वह सम्पदा छप्पन करोड़ की थी। वीरजी गरीब से अमीर बन गया। उसने गरीबी कैसी होती है, देखी थी। इसलिये वीरजी ने धन पाकर जनहित के अनेकानेक कार्य करवाये। हजारों लोगों को काम पर लगाया। सूरत में गोपीपुरा में प्रेमचन्द रायचन्द धर्मशाला आज भी है। मैं तो कभी सूरत गया नहीं, मेरी देखी हुई भी नहीं है। (आचार्यप्रवर अब सूरत पधार गए है।) उसके पास रांधेरा का पुल बना हुआ है, भोंहरा वहाँ तक फैला हुआ है, लोग कहते हैं।

वीर जी बोरा के पास अपार धन-सम्पदा थी। न्याय-नीति के साथ उनका व्यापार देश-विदेश में बढ़ता गया। जरूरत के समय वे राजा-महाराजा और नवाब-बादशाहों तक को सहयोग करते। उन्हें नगर श्रेष्ठी का पद मिला हुआ था। वे दीपावली पर अष्ट प्रहरी पौषध करते। प्रतिपदा को वीर जी को पड़वों की प्रसिद्धि हुई। उनकी संतान के रूप में एक सुपुत्री थी-फूला देवी। फूलादेवी के भी एक ही लड़का था, जिसका नाम था-लवजी। फूलादेवी को बचपन में वैधव्य देखना पड़ा, अतः वह वीर जी बोरा के यहाँ आकर रहने लगी। वह रोने-धोने के बजाय सामायिक, प्रतिक्रमण, जप, तप रूप धर्मध्यान करती। कहते हैं फूलाबाई से प्रतिक्रमण सुनते-सुनते लवजी को सात वर्ष की उम्र में प्रतिक्रमण याद हो गया।

आज आपको सामायिक-प्रतिक्रमण याद करने को कहा जाता है। बार-बार प्रेरणा के पश्चात् किसी को याद भी हो जाता है, तो अगले साल भूल जाते हैं। पर लवजी रोज-रोज प्रतिक्रमण सुनता था, अतः उसे पक्का हो गया।

उस समय यतियों का बहुत जोर था। उस क्षेत्र में यति बजरंग जी का विचरण था। शुद्ध साधुता की आराधना करने वाले उस समय विरले ही संत थे। एक बार बजरंग जी भिक्षा के लिए वीरजी के घर गये तब उनकी नजर लवजी पर पड़ी । देखते ही यति बजरंग जी ने अनुमान लगा लिया कि यह भाग्यशाली लड़का है। यति जी ने उस लड़के को धर्म-स्थान लाने के लिये कहा

। वह माँ के साथ यतिजी के स्थान पर पहुंचा। लवजी से यति बजरंग जी ने पूछा-तुम्हें क्या आता है? लवजी जवाब देते, इसके पूर्व माँ ने कहला दिया अभी इसे कुछ सिखाया तो है नहीं, आयेगा क्या? यति जी ने फिर भी बच्चे से पूछा तो वह एक-एक कर कई पाठ सुना गया। वह माँ से रोज प्रतिक्रमण सुनता था, इस कारण उसे प्रतिक्रमण कण्ठस्थ हो गया और उसने यति जी को सुना भी दिया।

यति जी बालक लवजी की प्रतिभा से प्रभावित हो गये और उसे ज्ञान-ध्यान सिखाने लगे। दशवैकालिक, उत्तराध्ययन, आचारांग, निशीथ, दशाश्रुत स्कन्ध, बृहत्कल्प की वाचना लेते लवजी ने छः शास्त्र कण्ठस्थ कर लिये। अर्थ की वाचना और स्वाध्याय करते-करते लवजी को वैराग्य आया। यतिजी ने उसे वाचना देना बन्द कर दिया। लवजी की रुचि थी, अतः जिज्ञासा पूर्वक निवेदन किया कि आप वाचना दीजिये। पुनः पुनः जिज्ञासा पर यतिजी ने कहा-"तूं मेरे पास दीक्षा लेना स्वीकार करे तो मैं आगे का अभ्यास कराऊँ।" लवजी ने दीक्षा की स्वीकृति दे दी तब यतिजी ने आगे का अभ्यास कराते द्रव्यानुयोग का सूक्ष्म रहस्य समझाकर गंभीर ज्ञान दिया। सिद्धान्त की जानकारी और शास्त्रों का रहस्य ध्यान में आने के बाद लवजी को लगा कि शास्त्र कुछ और कहता है, महाराज कुछ और व्यवहार करते हैं। महाराज यंत्र-मंत्र करते हैं, ज्योतिष का प्रयोग करते हैं। मर्यादा रहित वस्त्र-पात्र रखते हैं, देखकर विचार किया कि मैं चारित्र मार्ग का सर्वोत्तम आदर्श सामने रखकर दीक्षा अंगीकार करूँ। अपने उद्देश्य के लिए लवजी ने गुजरात, कच्छ, काठियावाड़, मालवा, मारवाड़, पंजाब आदि प्रांतों में साधु-आचार का एक हुण्डी रूप पत्र बनाकर भेजा, जिससे सही आचार का कहाँ-कहाँ पालन हो रहा है इसका जवाब आने पर सर्वश्रेष्ठ मार्ग पकड़ा जा सके। लवजी को अपने पत्र का कहीं से जवाब नहीं मिला। इससे भी उनके मन में निराशा-हताशा नहीं हुई। अन्ततोगत्वा उन्होंने सोच लिया कि मैं अपना मार्ग स्वतः बनाऊँगा। दृढ़ निश्चय कर लवजी ने अपने नानाजी के समक्ष दीक्षा की अनुमति के लिए भावना रखी।

नानाजी ने कहा- मेरे पास करोड़ों की विशाल सम्पदा है, उसका एक मात्र तूं ही मालिक है। मेरे कोई पुत्र नहीं, भाई-बन्धुओं के भी कोई संतान नहीं, इसलिए तुझे दीक्षा नहीं लेकर काम-काज संभालना है और हमारी सेवा करनी है। तूं एकमात्र दौहित्र है अगर तूं चाहे तो मैं अपनी सारी सम्पत्ति तेरे नाम लिखकर दे देता हूँ, तूं दीक्षा की बात छोड़ दे।

लवजी ने कहा- 'नानाजी! पैसा पाप बढ़ाने वाला है और पैसे की

आसक्ति नरक में ले जाने वाली है। यदि पैसा ही सब कुछ होता तो ये राज-राजेश्वर राजा इसे क्यों छोड़ते? सम्यक्त्वी के लिए तो कहा है-

चक्रवर्ती की सम्पदा, इन्द्र सरीखा भोग।
काक बीट सम लखत हैं, सम्यग्दृष्टि लोग।।

अर्थ अनर्थकारी है। मुझे पैसा नहीं चाहिये। मैं तो दीक्षा ग्रहण करना चाहता हूँ। बच्चे की जिद्द को देखते हुए वीरजी ने कहा-ठीक है, तूं दीक्षा ही लेना चाहता है तो मेरी एक शर्त है। तुझे मेरे गुरु बजरंगऋषि जी के पास दीक्षा लेनी होगी। तूं यदि मेरी शर्त स्वीकार करता है तो मैं तुझे आज्ञा देता हूँ।

लवजी यतिजी के पास पहुंचा और निवेदन किया कि मैं आपके पास दीक्षा लेना चाहता हूँ, पर मेरी एक प्रार्थना है। यति जी ने उसका वैराग्य देख रखा था। वे जानते थे कि यह दीक्षा लेगा। वैराग्य नहीं देखते तो महाराज शर्त रखते, लेकिन यहाँ वैरागी निवेदन कर रहा है। प्रार्थना क्या? लवजी ने कहा- मैं आपके पास दीक्षा ले लूंगा, पर आपके और मेरे विचार मिलते रहेंगे तब तक मैं आपके श्रीचरणों में रहूंगा और अगर आचार-विचार में कोई भेद हुआ तो दो साल के बाद मैं अलग विचरण कर सकता हूँ।

यति ने सोचा-एक बार महाराज बन गया तो फिर जायगा कहाँ? यति जी ने ऐसा सोचकर लिखित में स्वीकृति दे दी। नानाजी यही चाहते थे कि मेरा दोहिता मेरे गुरु के पास दीक्षा ले। उन्होंने बड़ी धूम-धाम के साथ मन की मुराद पूरी की और ठाट से दीक्षा दी। यह बात वि.सं.१६९२ की है। लवजी की दीक्षा सूरत में बड़े उत्साह से सम्पन्न हुई। दो वर्ष तक यति जी की चरण सेवा में रहकर जितना ज्ञान सीखना था लवजी ऋषि ने ज्ञान मिलाया और दो वर्ष के बाद चारित्र की आराधना में आई शिथिलता को दूर करने की भावना से निवेदन किया कि दशवैकालिक सूत्र के छठे अध्ययन की सातवीं गाथा में अठारह स्थान में से एक भी स्थान से रहित साधु निर्ग्रन्थता से भ्रष्ट हो जाता है। आपके इसमें क्या विचार हैं? यति जी ने कहा- भाई! यह पंचम आरा है, इसमें शुद्ध संयम की पालना नहीं हो सकती।

लवजी ने कहा- यदि कोई पालन करे तो?

यति जी ने कहा- उसे धन्यवाद है।

लवजी- आप शुद्ध संयम-साधना के लिए क्रियोद्धार करें?

यति जी ने कहा- मेरी वृद्धावस्था है और अब शुद्ध आचार का पालन करना अशक्य है।

लवजी ने कहा- ठीक है, आप शुद्ध साध्वाचार का पालन नहीं कर

सकते तो कोई बात नहीं, आप मुझे आज्ञा प्रदान करावें।

यति जी ने कहा- तुम सुखपूर्वक क्रियोद्धार करो। मेरी आशीष है और आज्ञा भी।

वि.सं. १६६४ में यति बजरंग जी को छोड़कर लवजी ऋषि, थोमण ऋषि और भानु ऋषि इस तरह तीन संतों ने सूरत के खंभात उद्यान में फिर से महाव्रत ग्रहण कर क्रियोद्धार किया।

एक परम्परा की यह भी मान्यता है कि संवत् १६८३ में आचार्य पूज्य धर्मसिंह जी महाराज ने क्रियोद्धार किया, कुछ जगह संवत् १६८५ का उल्लेख भी मिलता है। एक जगह पढ़ने में आया-

संवत् सोलह सौ पिच्यासिए, अहमदाबाद मंझार।
शिवजी गुरु को छोड़कर, धर्मसिंह हुआ बहार।।

कहते हैं १६८५ में पूज्य धर्मसिंह जी महाराज यतिजी को छोड़कर निकले। मैं आपको इतिहास की जानकारी दे रहा हूँ कि उस समय कैसी स्थिति थी। आज तो हम बहुत समाधि में हैं। हमारे सामने कोई समस्या नहीं है। हम बिना कठिनाई के साधना-आराधना कर सकते हैं। पर उस समय कठिनाइयां थीं।

विहार करते-करते लवजी ऋषि खंभात पधारे। वहाँ वे नागेश्वर तालाब के पास गुंसाई की धर्मशाला के नजदीक बनी प्याऊ में ठहरे। हर समय मुंहपत्ती बांधे रखना, गवेषणा करके निर्दोष आहार-पानी लेना, सबको शास्त्र के अनुसार क्रिया पालन की बात समझाना, उनका मुख्य कार्य था। भक्तों ने साधुता का सही रूप देखा तो श्रावक-श्राविकाओं के मन में श्रद्धा जागी और श्रद्धा के कारण संतों के पास लोगों का आवागमन भी बढ़ा।

चारित्रनिष्ठ संतों की सन्निधि में लोगों का आना-जाना देखकर यति वर्ग को उनके अंध श्रद्धालु भक्तों की बात समझ में आई कि यह लवजी ऋषि तो कबाड़ा कर देगा। इसे किसी तरह रोकना चाहिये। लवजी ऋषि को कोई बात कह सकता है तो वीर जी बोरा एक ऐसा माध्यम है जिसका हमें उपयोग करना चाहिये।

यतियों ने वीर जी को भड़काया। कहा- लवजी ने गुरु को छोड़ दिया है। वह अलग विचरण करके समाज में जहर घोल रहा है। आप उसे समझा सकते हैं, आपको यह काम करना चाहिये।

वीर जी स्वयं यतियों के प्रभाव में थे। वे यति बजरंग जी को अपना गुरु मानते थे इसलिए वीरजी ने वहाँ के नवाब को लिखा कि मेरा दौहित्र ढ़ोंगी

है और उसे पकड़ लिया जाना चाहिये।

खंभात के नवाब को वीर जी ने समय-असमय बहुत सहायता दी थी, अतः नवाब पर उनका प्रभाव था। नवाब ने संतों को पकड़ कर नजर कैद कर दिया। साधक नजर कैद में गोचरी-पानी कैसे लायें? तीनों संतों ने तेला कर लिया। तीन संत थे-लवजी ऋषि जी, थोमण ऋषि जी और भानु ऋषि जी। तेला करके वे ध्यान में बैठ गये।

एक दासी रोज उधर से निकलती थी। उसने देखा- ये संत न खाना खाते हैं, न पानी पीते हैं और न ही कहीं आते-जाते हैं। संतों को कैद में देखकर दासी ने जाकर बेगम साहिबा से कहा- जहाँ भी फकीरों को और संतों को सताया जाता है वहाँ कोई-न-कोई अनर्थ होता है। दासी ने कहा- ये संत तीन दिन से भूखे हैं आप कोई उपाय करो।

बेगम साहिबा ने नवाब साहब़ से निवेदन किया कि नजरबन्द संतों का क्या कसूर है?

नवाब बोला-कसूर तो कुछ भी नहीं।

बेगम- फिर इन संतों को क्यों कैद कर रखा है? संतों को बिना कसूर सताना ठीक नहीं।

नवाब को बात समझ में आ गई और उसने संतों को रिहा कर दिया।

यतियों को और उनके भक्तों को पता चला कि संत फिर से रिहा हो गये हैं, उन्होंने षड्यंत्र करके एक आदमी को सिखाया कि तुम्हें किस तरह संत का काम तमाम करना है?

एक दिन भानु ऋषि जी स्थंडिल से लौटकर आ रहे थे, उस वक्त उन पर तलवार से वार किया गया। तलवार के वार से मुनिश्री की वहीं मृत्यु हो गई। शव मंदिर के पिछवाड़े गाड़ दिया गया। संत किन-किन स्थितियों से गुजरे हैं, कैसे-कैसे संकटों का सामना किया है? मैंने चातुर्मास के प्रारम्भ में संतों पर संकटों का विवरण देते कहा था कि अनेकानेक संकटों के बाद भी यह जिनवाणी आज तक कैसे कायम रही है। यतियों के समय भी संतों पर कम संकट नहीं आए।

संत को मारते हुए एक सोनी ने देख लिया था। उसने गांव में जाकर श्रावकों से कहा कि तुम्हारे एक महाराज को मारकर मन्दिर के पिछवाड़े गाड़ दिया गया है। गांव में हो-हल्ला मचा। यतियों का प्रभाव था, अतः यतियों ने उन श्रावकों का रोटी-बेटी का व्यवहार बन्द करा दिया। वे कुए से पानी नहीं भर सकते। नाई उनकी हजामत नहीं बना सकता। धोबी उनके कपड़े नहीं धो

सकता। महाराज के अनुयायी जात-बाहर कर दिये गये।

लोग लवजी ऋषि के पास पहुंचे और सारी स्थिति सामने रखी। लवजी ऋषि ने बात सुन-समझकर उन श्रावकों से कहा- अभी सहनशीलता रखने का अवसर है, आप गम खायें।

श्रावकों का महाराज श्री के समक्ष वश नहीं चला तो वे दिल्ली बादशाह को फरियाद करने पहुंचे। दिल्ली में यति मौजूद थे। उन्होंने उन श्रावकों को बादशाह तक पहुंचने ही नहीं दिया। देखिये, यतियों का पूरे देश पर कैसा दुष्चक्र था!

दिल्ली गये श्रावक बादशाह से मुलाकात करने की जुगाड़ बैठा रहे थे कि एक काजी के पुत्र को सांप ने डस लिया। काजी अपने बेटे को यह सोचकर कि यह मर गया है अंतिम क्रिया करने को कब्रिस्तान लेकर जा रहे थे। श्रावक समीप में ठहरे हुए थे, उन्होंने सारा घटनाक्रम देखा और भक्तामर के ४१वें श्लोक को बोलकर सांप द्वारा डसे बच्चे का जहर उतार दिया। बच्चा उठ बैठा। काजी ज़ी श्रावकों के इस उपकार पर बहुत खुश हुए और उन श्रावकों को बादशाह तक ले गये।

श्रावकों ने घटित घटना बादशाह के समक्ष रखी और उनसे न्याय की गुहार की। बादशाह ने हुक्म जारी किया और खुदाई करके हड्डियों के साथ शव बाहर निकाला। बादशाह ने यह भी हुक्म दे दिया कि उस मंदिर को तुड़वा दिया जाय। श्रावकों ने कहा-किसी की आस्था पर कुठाराघात नहीं किया जाना चाहिये।

मैं आपको परम्परा का प्रारम्भ से परिचय दे रहा हूँ। यति जानते थे कि अगर सही धर्म का आचरण करने वाले इसी तरह बढ़ते गये तो फिर हमारा यह गोरख-धंधा चलने वाला नहीं । यतियों ने शुद्ध साध्वाचार को अपने लिये खतरा मान लिया। ऋषि परम्परा के मूल पुरुष पूज्य लवजी ऋषि से वे जलते थे। यतियों ने एक और षड्यंत्र रचा। बुहरानपुर से इन्दलपुर जाते एक रंगारण से जहर मिले लड्डू लवजी ऋषि को बेले के पारणे में बहरवा दिये। लवजी ऋषि को जहर का आभास हो गया। उन्होंने सोचा, अब बचने की स्थिति नहीं है इसलिए संथारा कर लिया और देवलोक गमन कर गए।

पूज्य लवजी ऋषि के पश्चात् इस परम्परा में सोमजी, कानजी, ताराऋषिजी, बक्षु जी आचार्य हुए। आगे चलकर वि.सं.१९८९ में पूज्य अमोलक ऋषि जी महाराज को इन्दौर में आचार्य पद दिया गया। आचार्य पूज्य श्री अमोलकऋषि जी महाराज का वि.सं. १९३४ में किस्तूरचन्द जी कास्टिया

की धर्मपत्नी हुलासदेवी की कुक्षि से भोपाल में जन्म हुआ। कास्टिया परिवार मूल रूप से मेड़ता का था। पूज्य श्री की दीक्षा वि.सं. १६४४ की फाल्गुन कृष्णा द्वितीया को इच्छावर में हुई। आपने तीन वर्ष में बतीस शास्त्रों का हिन्दी अनुवाद किया। लगभग सत्तर ग्रन्थ लिखे और करीब ५० हजार पृष्ठों की साहित्य रचना की।

ऋषि परम्परा में कैसे-कैसे विचक्षण महापुरुष हुए। स्वनाम धन्य पूज्य तिलोकऋषि जी महाराज ने ७० हजार पद्यों की रचना की, २७ चरित्र ग्रन्थ लिखे। उनको सत्रह शास्त्र कण्ठस्थ थे। उनका जन्म १६०४ में हुआ। वि.स. १६१४ माघ कृष्णा १, रतलाम में दीक्षा, सं. १६३५ में सर्वप्रथम आप दक्षिण प्रांत में पधारे। आप अनूठे व्यक्तित्व थे। ३६ वर्ष की वय में ही भरी जवानी में श्रावण कृष्णा द्वितीय को आपका अहमदनगर में स्वर्गवास हुआ।

पूज्य श्री देवऋषि जी महाराज के पश्चात् ऋषि परम्परा में दसवें पाट पर पूज्य श्री आनन्दऋषि जी म.सा. को आचार्य पद दिया गया। उनका जन्म वि.सं.१६५७ की श्रावण शुक्ला प्रतिपदा को गुगलिया देवीचन्द जी के यहाँ माताश्री हुलसादेवी जी की कुक्षि से चिंचोड़ी ग्राम में हुआ। जन्म का नाम नेमीचन्द्र था। बाल्यकाल में घर-परिवार के संस्कारों से सत्संग-सेवा में उनकी रुचि थी।। बाल्यावस्था में ही पिता का वियोग हो गया। पू. रत्नऋषि जी के चिंचोड़ी पधारने पर माँ ने कहा-बेटा! गांव में पर्युषण में भी कोई प्रतिक्रमण कराने वाला नहीं है, अतः गुरु चरणों में जाकर प्रतिक्रमण सीख ले। इस बीच तांगे का पहिया शरीर पर से निकल गया, चोट नहीं आई और सं. १८६६ में प्रतिक्रमण सीखते आपको वैराग्य आ गया।

वि.सं. १६७० मार्गशीर्ष शुक्ला नवमीं को मीरी ग्राम में पूज्य श्री रतनऋषि जी महाराज के मुखारविन्द से उनकी दीक्षा हुई। गुरु चरण सरोजों में रहते नवदीक्षित मुनि आनन्दऋषि जी अध्ययन में जुटे। वि.सं. १६७५ में उच्च शिक्षा दिलाने के लिए पूज्य श्री रतनऋषि जी महाराज उनको लेकर पूना पधारे। पूना में गणेश शास्त्री गोडबोले ने यह कह कर संस्कृत पढ़ाने से इन्कार कर दिया कि जैन नास्तिक होते हैं उन्हें ज्ञान देना पाप है। फिर समाचार पत्र 'केसरी' आदि में विज्ञापन निकला और बनारस से आये राजधारी त्रिपाठी से पूज्य आनन्दऋषि जी को संस्कृत-प्राकृत आदि भाषाओं का ज्ञान दिलाया गया।

मैं आपको पूज्य आचार्य श्री शोभाचन्द्र जी महाराज के प्रसंग से बता चुका हूँ कि समाज में अध्ययन-अध्यापन की व्यवस्था पंडितों पर निर्भर थी। पूंज्य गुरुदेव आचार्य श्री हस्तीमल जी महाराज को पं. दुःखंमोचन ज़ी झा से

पढ़ाने के पूर्व उनका गुरु ने परीक्षण किया, पर जैन समाज का कोई विद्वान नहीं, यह बात गुरुदेव को अखरी। ऐसे ही पूज्य आनन्दऋषि जी महाराज को भी यह बात नागवार गुजरी। वि.सं. १९८० में श्री तिलोक रत्न स्थानकवासी जैन धार्मिक परीक्षा बोर्ड की स्थापना हुई। जैन विद्वान तैयार हों इस लक्ष्य से १९८४ में तिलोक जैन पाठशाला पाथर्डी की स्थापना की गई। आज जैन समाज की कई पाठशालाएँ हैं, विद्यापीठ हैं, धार्मिक परीक्षा बोर्ड हैं, स्कूल और कॉलेज हैं। सादड़ी में गुरुकुल है, परन्तु पढ़ने वाले जैनों की संख्या देखें तो वह नगण्य है। हमारे विद्यालयों-विद्यापीठों में सब तरह की सुविधा है, लेकिन आपको अपने बच्चों को इंग्लिश मीडियम और कॉनवेंट स्कूल अच्छी लगती है। आप हजारों-लाखों रुपयों का डोनेशन देकर भी बच्चों को वहाँ भर्ती करवाते हैं। विद्यापीठ चाहे वह जलगांव की है या जयपुर की, व्यावहारिक शिक्षा के साथ वहाँ धार्मिक शिक्षा भी दी जाती है, अध्ययन के बाद योग्यतानुसार(जलगांव में) सर्विस की गारण्टी भी है, फिर भी वहाँ बच्चे कम आते हैं।

आपके बच्चे अंग्रेजी स्कूलों में पढ़ते है। वे कहाँ जाते हैं, क्या करते हैं आपको ध्यान नहीं रहता। उनका खान-पान, रहन-सहन और आदतें बदल जाती हैं। घर के जितने चाहिये उतने संस्कार नहीं, फिर संगति दोष से बच्चों में विकृतियाँ आ जाती हैं, तब आप महाराज से आकर कहते हैं- महाराज! आप बच्चे को समझाओ। मैं पूछूँ- आपने बच्चों को संस्कार कब दिए? क्या उन्हें जैन धर्म और निर्ग्रन्थ परम्परा का कभी ज्ञान दिया है? आपको तो बच्चों के साथ बैठकर बात करने का समय नहीं, तो संस्कार कौन दे? कभी किसी का बच्चा अध्ययन के लिए विदेश गया और वहाँ से कोई मेम ले आए तो हमसे कहेंगे-बाबजी! क्या करें?

मैं जिस महापुरुष की बात कह रहा हूँ, उन्होंने समाज की स्थिति देखकर ही तो धार्मिक पाठशालाओं की प्रेरणा की, धार्मिक परीक्षा बोर्ड प्रारम्भ हुआ। आचार्यप्रवर पूज्य श्री आनन्दऋषि जी महाराज दूरदर्शी महापुरुष थे। उनका विचरण महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, आन्ध्रप्रदेश, राजस्थान, हरियाणा, पंजाब, जम्मू, उत्तरप्रदेश आदि प्रान्तों में रहा।

मैं जब विरक्त अवस्था में था, विक्रम संवत् २००७ में आचार्यप्रवर पूज्य श्री आनन्दऋषि जी महाराज और पूज्य गुरुदेव आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा. का गुलाबपुरा में मिलना हुआ, जिसमें संघ-एकता पर दोनों महापुरुषों के बीच लम्बी चर्चा चली। वि.सं.२०१० में आप मारवाड़ क्षेत्र के भोपालगढ़ कस्बे में पधारे। भोपालगढ़ से आचार्यप्रवर पूज्य आनन्दऋषि जी

महाराज को जोधपुर पधारना था, पूज्य गुरुदेव आचार्य श्री हस्तीमल जी महाराज ने फरमाया कि आप मारवाड़ पधारें हैं तो यह मेरा कर्त्तव्य है कि आपश्री के विचरण-विहार में कोई असुविधा न हो। दोनों महापुरुष रास्ते में छोटे गांव हैं, इस विचार से आगे-पीछे विहार करते थे। मारवाड़ के पुराने लोगों को तो ध्यान है, आपको शायद पहली बार सुनने को मिल रहा होगा। भोपालगढ़ से जोधपुर आते आचार्यप्रवर पूज्य आनन्दऋषि जी महाराज के विहार में किसी संत को सांप ने डस लिया। लोगों ने जाकर सूचना दी। आप ताज्जुब करेंगे पूज्य आनन्दऋषि जी महाराज ने कहा- पीछे सहमंत्री श्री हस्तीमल जी महाराज पधार रहे हैं वे संभाल लेंगे। पूज्य आनन्दऋषि जी महाराज उस समय प्रधानमंत्री थे और पूज्य गुरुदेव सहमंत्री।

पूज्य गुरुदेव वहाँ पधारे, देखा और अपनी मंत्र व साधना शक्ति से संत को स्वस्थ किया और उसे अपने साथ लेकर पधारे। संत को सांप डस जाय और सूचना मिलने के बाद मुँह से निकला कि मेरे पीछे पधारने वाले सहमंत्री जी संभाल लेंगे। उनका कितना विश्वास रहा होगा पूज्य गुरुदेव पर, आप कल्पना कर सकते हैं। एक परम्परा का दूसरी परम्परा के साथ कैसा सामंजस्य था!

मुझे याद आता है वि.सं.२०१२ में उन दोनों महापुरुषों का मसूदा में मिलन हुआ। आचार्यप्रवर पूज्य श्री आनन्दऋषि जी महाराज के संत को निमोनिया हो गया। उस वर्ष प्रधानमंत्री आनन्दऋषि जी महाराज का चातुर्मास बदनोर खुल चुका था और पूज्य गुरुदेव का चातुर्मास अजमेर खुला हुआ था। आचार्यप्रवर पूज्य आनन्दऋषि जी महाराज ने अपने शिष्य हिम्मत ऋषि जी और पुण्यऋषि जी को स्वास्थ्य समाधि के लिए पूज्य गुरुदेव के पास रखा और स्वयं बदनोर चातुर्मासार्थ पधारे। ऐसा कब होता है? दोनों महापुरुषों को एक-दूसरे पर कितना भरोसा था?

मेरे दीक्षा लेने के बाद वि.सं. २०२० में अजमेर सम्मेलन में दोनों महापुरुषों की चरण-सेवा करने का सौभाग्य मिला। आचार्यप्रवर पूज्य आनन्दऋषि जी महाराज ने मुझको इंगित कर फरमाया कि तुम्हें विचक्षण ज्ञानी और क्रिया सम्पन्न उपाध्याय श्री का सान्निध्य मिला है "तुम रग-रग में और कण-कण में सेवा और समता के भाव रखना।" मैं आज भी सोचता हूँ वे कैसे उदामना महापुरुष थे जिन्होंने मेरे जैसे नवदीक्षित पर मंगलभावों की कृपा बरसाई।

जब भी किसी महापुरुष के गुण स्मरण का प्रसंग आता है तो समय

का अतिक्रमण हो जाया करता है। मैं संक्षेप में अपनी बात समेटने का प्रयास करूंगा। वि.सं. २००६ में सादड़ी सम्मेलन में उस महापुरुष को प्रधानमंत्री पद दिया गया। वि.सं.२०१३ में उन्हें उपाध्याय पद और वि.सं. २०१६ में संघनायक आचार्यपद से अलंकृत किया गया। उनके राजस्थान में आठ चातुर्मास हुए और विचरण-विहार में पूज्य गुरुदेव की सेवा में रहते उनसे कई बार मिलने का अवसर आया। वे सरल स्वभावी थे। छोटे से छोटे श्रावक को आदर से संबोधित करने वाले महापुरुष विरले होते हैं।

आचार्यप्रवर पूज्य आनन्दऋषि जी महाराज के विचारों में परिपक्वता थी और वे स्पष्ट धारणा के धनी थे। सं.१९८४ में जब वे पूज्य गुरुदेव श्री रतनऋषि जी महाराज के साथ कान गांव से हिंगणघाट जा रहे थे, मुनि मण्डल का प्रातः करीब साढ़े नौ बजे अलीपुर के पास विट्ठल मंदिर में पधारना हुआ कि अचानक पूज्य श्री रतनऋषि जी महाराज की तबीयत बिगड़ी और दिन में करीब बारह बजे उनका स्वर्गवास हो गया। यह बात वि.सं. १९८४ ज्येष्ठ कृष्णा सप्तमी की है। उस समय वहाँ का मालगूजर आया और बोला- महाराज अभी-अभी तो आए, अभी कैसे स्वर्गवास हो गया? बात क्या है? क्या शिष्यों ने कुछ कर दिया?

मालगूजर को जवाब दिया गया-हमारे लिए तो गुरु देवता तुल्य होते हैं, हम भला उनका कुछ करना तो दूर, सोच भी नहीं सकते।

मालगूजर- फिर ये महाराज कैसे गुजर गए?

उसे समझाया गया- भाई, मौत आ गई थी। काल का क्या भरोसा? वह कभी भी आ सकता है।

मालगूजर ने कहा- दाह संस्कार के लिए मंदिर के सामने जगह है, वहाँ दाह संस्कार कर दो और समाधि बना दो।

आचार्य पूज्य आनन्दऋषि जी महाराज ने कहा-भाई, हमारे यहाँ समाधि नही मानते।

मालगूजर ने कुछ आदमियों को बुलवाया, दाह संस्कार किया।

मैं आपसे यही कह रहा था कि आचार्यप्रवर पूज्य आनन्दऋषि जी महाराज की धारणा सही थी। उन्होंने २७ वर्ष की वय में समाधि के विषय में जो कुछ कहा, उसी बात को कुशालपुरा चातुर्मास में "मृत्यु को ध्यान में रखो" प्रवचन करते भी यही फरमाया कि "हमारे यहाँ समाधि नहीं मानते।" कुशालपुरा के प्रवचन जो **आनन्द प्रवचन** नाम से प्रकाशित हैं, आप आनन्द प्रवचन के दूसरे भाग में देख सकते हैं, पढ़ सकते हैं। मूर्ति पूजा और जड़ पूजा

का निषेध करने वाले महापुरुष की आप जय बोलते हैं, मैं जय बोलने का निषेध नहीं करता, जय बोलने के साथ आप उनके सिद्धांतों पर चलें तभी सच्चे भक्त कहलाने के अधिकारी होंगे। आचार्यप्रवर पूज्य श्री आनन्दऋषि जी महाराज के मना करने पर वे अनपढ़ मालगूजर तो समझ गये, आज उन्हीं के भक्तों ने समाधि बना दी, क्या यह आश्चर्यजनक तो नहीं? समाधि जड़पूजा की ओर आकर्षित करती है और हम गुणों के पुजारी हैं। जड़ पूजा होगी वहाँ भाव पूजा और भाव-भक्ति गौण हो जायेगी।

आप उस महापुरुष के सिद्धान्तों को समझें, उन पर अमल करें। हमारा संबंध गुणों से है। उस महापुरुष के मैं किन-किन गुणों का स्मरण करूं, वे सरलता, समता, सहिष्णुता के बेजोड़ संगम थे। मैं उनके गुण स्मरण करूं साथ ही आपसे भी अपेक्षा रखकर चलता हूँ कि उस महापुरुष के अनेकानेक गुणों में से कोई भी गुण जीवन-व्यवहार में चरितार्थ करेंगे तो सुख-शांति प्राप्त कर सकेंगे।

जवानी का जोर-शोर

श्री अनराज बोथरा

जवानी का जोर-शोर जावे है दौड़-दौड़,
करो आत्म काजा, ओ चेतन राजा,

जो नर से बने नारायण, वो प्रभु के गुण गावे है
प्रभु से प्रेम किया नहीं जिसने, वो पीछे पछताए है।
बड़ा दुःख पाए जीया भोग कर्मो का किया इसे बना जा.....।।

जन्म-मरण ये बुरी बला है, कष्ट सहा नहीं जाए।
कर्मों का बन्धन कौन हटाए, जिससे मन घबराए।
मतलब की है रिश्तेदारी, कोई न आवे लारी पुण्य कमा जा...।।

चार दिनों का ये जीवन है, जिस पर मौज उड़ाए।
सिर पे काल खड़ा है तेरे, ना मालूम कब आए।
खड़ी रहे दौलत सारी, लागे ना कुछ भी कारी, रंक हो चाहे राजा...।।

जब तक तेरे पुण्य चेतन लगता सब जग प्यारा।
पुण्य क्षीण होते ही बनता तन का वस्त्र खारा।
सहे दुःख-सुख की मार, जीव कर्मानुसार चले नहीं साजा...।।

चतुर वह ही चेतन जग में जीवन सफल बनाए।
तप संयम का करे आराधन वीतराग गुण गाए।
'अनराज' है बलिहारी हो जावे भव से पार।
प्रभु गुण गाजा ओ चेतन राजा।
जवानी का जोर-शोर जावे है, दौड़ दौड़ करो आत्म काजा।।

-दीवानों की गली, घासमण्डी, जोधपुर (राज.)

मैत्री भावना

उपप्रवर्तक डॉ. राजेन्द्र मुनि

पाप दुःख से सभी जीव हों मुक्त, सुखी हों उन्नत हों।
सबका हो कल्याण, स्व-पर हित में रत हों।।

मैत्री भावना का व्यापक भावार्थ है- पर-हितैषिता। मैत्री में एक ऐसा माधुर्य पूर्ण आकर्षण है जो समीपता और हार्दिक घनिष्ठता स्थापित करता है। मनुष्य का मन परार्थ के प्रयोजन से मंगल भावना का सदन होकर विमलता की आभा से जगमगा जाता है, वचन विनीत हो जाते हैं और काया सेवाप्रवृत्त हो जाती है। मनुष्य को मनुष्य बनाने का यह एक अमोघ साधन है।

इस मैत्री भावना का क्षेत्र हमारे स्वजन-परिजन अथवा परिचित सम्पर्कियों तक सीमित नहीं है। अति उदार होकर यह भावना तो लोक के समस्त जीवों के प्रति समर्पित जन की व्यापक उदात्तता बन गयी है।

मित्ती मे सव्वभूएसु वेरं मज्झं न केणइ।

सभी के प्रति मेरे मन में मैत्री भाव है, किसी के साथ मेरी शत्रुता नहीं। यहाँ 'सभी'-की व्याख्या में ही इस मैत्री भावना की गरिमा निहित है। चिन्तक जब सभी के विषय में ऐसा सोचता है तो इस वृत्त में उसके स्वजन-परिजन ही नहीं सम्पूर्ण मानव जाति आ जाती है। वे सभी आ जाते हैं जो चाहे परिचित-अपरिचित हों, स्वदेश के अथवा परदेश के हों। यही नहीं नारक और देवयोनि के समस्त जीव भी 'सभी' में सम्मिलित हो जाते हैं, ये ही नहीं समग्र जीव-समुदाय आ जाता है चाहे वे जीव त्रस हों अथवा स्थावर। प्राणी मात्र की हितैषिता को समर्पित यह भावना इस प्रकार अतिव्यापक है और यह धारक की आत्मा को भी इसी प्रकार महान्, विशाल और व्यापक रूप प्रदान कर देती है। यह आवश्यक सूत्र है, जिसका पाठ और चिन्तन जैन श्रमण-श्रमणी प्रतिदिन प्रातः सायं अनिवार्यतः करते हैं। उनकी चिन्तन-धारा इस दिशा में अग्रसर होती है कि मैं सर्वप्राणियों को अपनी आत्मा के समान समझता हूँ। प्रमाद से, भूल से अथवा अज्ञात रूप में भी मुझ से किसी प्राणी के प्रति कोई अपराध हो गया हो, कोई अहित अथवा हानि हो गयी हो तो मैं उन सभी जीवों को खमाता हूँ, अपनी भूल-दोष के लिए क्षमायाचना करता हूँ। वे मुझे क्षमा प्रदान करें-

खामेमि सव्वे जीवा, सव्वे जीवा खमन्तु मे।

मैत्री भावना का मूल ही यह है कि दूसरों की हितचिन्ता, मंगल कामना की जाय- **मैत्री परेषां हितचिन्तनं यद्।**

'भगवती आराधना' में मैत्री भावना के लिए जो समुचित आधार और

तर्क रहा करता है- उसके चिन्तन की भी प्रेरणा दी गयी है। मैत्री भावना में चिन्तन किया जाता है कि- मेरे साथ-साथ सभी जीव संसार में परिभ्रमण करते रहे हैं। सभी के साथ मेरे जाने-अनजाने अनेक संबंध रहे हैं और मेरे साथ उनके अनेक उपकार भी रहे हैं। अतः वे सब मेरे कुटुम्बीजन हैं, उपकारी हैं। आभारयुक्त विनय के साथ यह भावना जब चिन्त्य हो उठती है तो व्यवहारगत अपेक्षित परिवर्तन मनुष्य में सुगमता से आने लगते हैं। इस हितचिन्ता की यह पराकाष्ठा है कि मनुष्य यह सोचने के लिए प्रेरित हो जाय कि मेरे कारण ही नहीं और भी किसी कारण से किसी जीव के लिए दुःखोत्पत्ति न हो, यह कामना मैत्री का सच्चा स्वरूप है। उसकी यह कामना प्रबल हो कि-

जीवन्तु जन्तवः सर्वे क्लेशव्यसनवर्जिताः।
प्राप्नुवंति सुखं, त्यक्त्वा वैरं पापं पराभवम्।।

संसार के समस्त जीव क्लेश, कष्ट और विपत्तियों से दूर रहकर सुखपूर्वक रहें, परस्पर वैर न रखें, पाप न करें, कोई किसी को पराभव न दे। मैत्री का यह लक्षण आचार्य शुभचन्द्र ने ज्ञानार्णव में प्रस्तुत किया है। लगभग इसी स्वर को आचार्य हेमचन्द्र द्वारा दिये गये लक्षणों में ध्वनित पाया जाता है- जगत का कोई प्राणी पाप न करे, कोई प्राणी दुःख-भाजन न बने। सभी प्राणी दुःखमुक्त हो जाये- यह मैत्री भावना है।(योगशास्त्र ४/११८) मैत्री भावना के विषय में सार रूप में कहा जा सकता है-

१. लोक के सभी देव, नारक, तिर्यंच, स्थावर और मनुष्य योनि के समस्त जीवों के लिए हितचिन्ता करना।
२. उनके जीवन के उत्थान की कामना करना।
३. संसार भ्रमण में सभी जीवों द्वारा किये गये उपकारों का आभार मानना और उनकी मंगल कामना करना।
४. सभी जीव दुःख और पापों से मुक्त होकर सुखी हों-ऐसी कामना करना। यही मैत्री भावना का स्वरूप है।

शास्त्रीय दृष्टि से भी आत्मा-आत्मा सभी एक रूप हैं, समान हैं। समान ही लक्ष्य और समान ही साधना पथ है। ऐसे समानों में मैत्री-भाव का होना भी सहज है, स्वाभाविक है। कहा भी जाता है- **समानशीलव्यसनेषु सख्यम्।**

हमारे आचरण में मैत्री भावना के साकार होने पर सारा जगत हमें अपना लगेगा-हमारा विरोधी भी हमें शत्रु प्रतीत नहीं होगा। हम सभी के कल्याण और सुखार्थ शुभकामी होंगे, किसी का अहित करना तो दूर रहा, अहित का विचार भी हमारे मन में न आयेगा, तो इसका प्रभाव हमारे कट्टर

विरोधियों पर भी अनुकूल ही होगा। उनमें भी वैरभाव की तीव्रता क्रमशः शिथिल हो जायेगी और अन्ततः वे हमारे मित्र हो जायेंगे। कोई हमारा शत्रु नहीं होगा। हमारा मित्र-समाज समस्त लोक पर्यन्त व्याप्त हो जायेगा। हम सबके और सब हमारे हो जायेंगे। जीव मात्र के साथ समत्व के व्यवहार से हमारी आत्मा अद्‌भुत आभा से जगमग हो उठेगी।

स्थानीय धार्मिक शिक्षण-शिविर व पाठशाला हर गांव नगर में हो

नैतिक आध्यात्मिक क्रांति का प्रेरक है	शिविर
चरित्र निर्माण की प्रयोगशाला का नाम है	शिविर
तत्त्वज्ञान व शास्त्रीय ज्ञान सीखने का साधन है	शिविर
ज्ञान दर्शन चारित्र तप की आराधना का प्रशिक्षक है	शिविर
छिपी हुई प्रतिभाओं को आगे लाने का नाम है	शिविर
विनय, विवेक, अनुशासन सिखाने का नाम है	शिविर
हर काम अपने हाथ से करने का प्रशिक्षण है	शिविर
टी.वी., सिनेमा, वीडियो के खतरनाक खेल से बचने की प्रेरणा है	शिविर
अपने आपसे मुलाकात करने का प्रेरक है	शिविर
व्यसन मुक्त संस्कार युक्त जीवन जीने का प्रेरक है	शिविर
पाश्चात्य भौतिक रंग से अलग हटकर अध्यात्म रस पान करने का स्थान है	शिविर
बाल, युवा, वृद्ध, महिला सभी को दिशा बोध देने का स्थान है	शिविर

आज के समय में पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव, भौतिकता की चकाचौंध तथा टी. वी. के बढ़ते हुए आकर्षण से बाल-युवा पीढ़ी में संस्कारों का अभाव बढ़ता जा रहा है। ऐसे भीषण समय में नैतिक-आध्यात्मिक चेतना जागृत करने हेतु धार्मिक शिविर एक सशक्त माध्यम है। इससे जीवन का नवनिर्माण होता है। इस बात को मद्देनजर रखते हुए छोटे-बड़े हर गांव, नगर में सभी उम्र के लिये विशेषतः बाल-युवा पीढ़ी के लिये ग्रीष्मकालीन अवकाश में कम से कम 8-10 दिन का स्थानीय धार्मिक शिक्षण शिविर का अवश्य ही आयोजन किया जाना चाहिये। उसमें स्थानीय प्रबुद्ध श्रावक-श्राविकाओं या स्वाध्यायियों की सेवा ले सकते हैं। कई संस्थाएँ भी इस दिशा में सतत प्रयत्नशील हैं। स्थानीय या क्षेत्रीय शिविर के आयोजन के साथ ही पूरी गर्मी की छुट्टियों में प्रतिदिन एक घंटा धार्मिक पाठशाला संचालित हो।

शिविर में शिशु सुमन खिलते हैं
शिविर में ज्ञान के दीप जलते हैं
हमने तो शिविर में लाभ ही लाभ देखा है
शिविर में जन्म-जन्म के संस्कार बदलते हैं।

बाल-युवा पीढ़ी के शिविर के साथ ही श्रावकों का सुबह 2 घंटा एवं श्राविकाओं का दोपहर 2 घंटा अवश्य ही शिक्षण-शिविर लगे, ऐसा प्रयास हो।

-महेश नाहटा, नगरी (छत्तीसगढ़) ४९३७७८

राग-द्वेष

श्री श्रीकृष्णमल लोढ़ा

शास्त्रकारों ने पाप की व्याख्या करते हुए अठारह प्रकार के पाप बताये हैं। उनमें राग और द्वेष की भी गणना की गई है।

राग– किसी भी पदार्थ के प्रति मोहरूप, आसक्ति-रूप आकर्षण होने का नाम राग है अथवा पौद्गलिक सुख की अभिलाषा होने का नाम राग है। दूसरे शब्दों में माया व लोभ की वृत्ति के साथ आसक्ति राग है। जब हम किसी बाह्य वस्तु को अपनी बनाना चाहते हैं या मात्र अपनी ही मान लेते हैं, तब उसके प्रति राग होता है और जहाँ राग है वहाँ सभी अनर्थ सम्भव हैं।

द्वेष–अपने प्रतिकूल कटु बात सुनकर या कोई कार्य देख कर जल उठना द्वेष है। द्वेष होने पर मनुष्य अन्धा हो जाता है। अतः वह जिस पदार्थ या प्राणी को अपने लिये बुरा मानता है, उसका झटपट नाश करने के लिये तैयार हो जाता है। अपने विचारों का उचित संतुलन खो बैठता है। द्वेष, क्रोध और मान के अधीन जीव का परिणाम है।

राग-द्वेष से बहुत पाप होते हैं। अज्ञानी, पापी के संबंध में कहा गया है–

"राग-दोसस्सिया बाला, पावं कुव्वंति ते बहुं।"–सूत्रकृतांग 1/8/8

अज्ञानी जन राग-द्वेष का आश्रय लेकर बहुत पाप करते हैं। राग-द्वेष में रमण करने वाला मनुष्य संसार में दुःखों को भोगता है और छुटकारा नहीं पा सकता। पाप से तभी बचा जा सकेगा, जब मनुष्य का राग-द्वेष से बचने का प्रयत्न होगा।

"रागदोसाभिहया, ससल्लमरणं मरंति जे मूढा।
ते दुक्खसल्लबहुला, भमंति संसारकंतारे।।

–मरणसमाधि प्रकीर्णक, 51

राग-द्वेष से अभिभूत जो मूढ मनुष्य शल्यपूर्वक मरते हैं, वे विविध दुःख रूप शल्यों से पीड़ित होकर संसार रूप अटवी में परिभ्रमण करते हैं। मनुष्य को संसार में कष्ट अभीष्ट न हो, दुःख अभीष्ट न हो तो राग-द्वेष से दूर रहना चाहिए।

राग-द्वेष से संबंधित "दर्पिका-कल्पिका" का स्वरूप भी जानना आवश्यक है।

"रागद्दोसाणुगता तु दप्पिया, कप्पिया तु तदभावा।
आराधतो तु कप्पे, विराधतो होति दप्पेणं।।"
"पीतिलक्खणो रागो, अपीतिलक्खणो दोसो,

अनुगता सहिया णिक्कारणलक्खणो दप्पो।।"

अर्थात् प्रीति की परिणति वाला राग है और अप्रीति की परिणति द्वेष में है। अतः राग-द्वेषपूर्वक की जाने वाली प्रतिसेवना (निषिद्ध आचरण) दर्पिका है, सदोष है। राग-द्वेष से रहित प्रतिसवेना कल्पिका है और यह निर्दोष है। कल्पिका में संयम की आराधना है और दर्पिका में निश्चित ही संयम की विराधना है।

बाह्य वस्तु के आधार पर किसी को अणुमात्र भी कर्मबन्ध नहीं होता है। कर्मबन्ध अपनी भावनाओं पर आधारित होता है।

अब राग-द्वेष पर विजय प्राप्त करने वालों के संबंध में विचार करना आवश्यक है। एक प्रश्न पैदा होता है कि "जिन" कौन बन सकता है।

"जयंति रागद्वेष-मोहानिति जिनः"

जिन्होंने राग-द्वेष एवं मोह को जीत लिया है वे जिन कहलाते हैं। भगवान राग-द्वेष और मोह पर विजय प्राप्त कर 'जिन' बने हैं।

जैन सन्त और महासतियां "मा रूष मा तुष" सिद्धान्त का पूर्ण पालन करते हैं। वे राग-द्वेष से परे रहने का प्रयास करते हैं।

राग-द्वेष के वशीभूत होकर दोषपूर्ण विचार अथवा कार्य किया हो तो साधु-साध्वियों के लिए क्षमा मांगना आवश्यक है।

"रागेण व दोसेण व अहवा अवायन्नुणा पडिनिवेसेणं।
जो मे किंचि वि भणिओ तमहं तिविहेण खामेमि।।

—मरणसमाधि प्रकीर्णक—214

राग-द्वेष, अकृतज्ञता अथवा आग्रहवश मैंने जो कुछ भी कहा है, उसके लिये मैं मन, वचन और काया से क्षमा चाहता हूँ।

राग और द्वेष का कोई भी कार्य करने से पाप-कर्म का बन्धन होता है। आत्मा कर्मों के बोझ से भारी हो जाती है। आत्मा दूषित होकर पतन के मार्ग की ओर अग्रसर होती है। राग-द्वेष से आत्मा विषयाभिमुख हो अधोमुखी मार्ग की ओर जाती है। इस संबंध में एक जैन महासती के विचार इस प्रकार हैं-

"कर्मबन्धन का मूल कारण राग-द्वेषादि भाव हैं। इष्ट और अनिष्ट की कल्पना में से राग-द्वेष जन्म लेता है, परन्तु यह इष्ट है और यह अनिष्ट है, इससे अगर जीव उदासीन बने और विमुख बन जाए, उसकी चिन्ता छोड़ दे तो फिर किसी भी पदार्थ के प्रति राग-द्वेष या क्रोध नहीं होता। यह मेरा मित्र है और यह मेरा शत्रु है, यह महल अच्छा है और यह कुटिया खराब है, यह मुझे मान देता है और इसने मेरा अपमान किया है, ऐसा भाव न लाए और सभी में समभाव रखे। आत्मा से अर्थात् बाह्य पदार्थों के प्रति राग करने से वह बचे।

इच्छानुसार कार्य न होने पर दिल में दुःख होता है। आर्तध्यान और रौद्रध्यान होता है, उससे कर्मबन्धन होता है। तब जो ऐसा विचार करते हैं कि मैं तो अविनाशी, शाश्वत और अटूट सुख का भंडार हूँ, मैं ऐसे बाह्य और अनित्य पदार्थों के लिये क्यों दुनियां में पड़ूँ ? उन पर क्यों राग करना ? वे सभी तो नाशवंत हैं और उसके पीछे नये कर्मबन्धन कर राग की रामायण खड़ी करनी है। इसकी अपेक्षा मैं उसका राग छोड़ दूँ तो मेरी आत्मा संसार में महासुखी बन सकती है और परलोक में भी महासुखी बन सकती है।"

जो राग-द्वेष को जीत लेता है, उसे वीतराग कहा जाता है। वीतराग भाव के कारण ही मुनि संसार का सबसे सुखी साधक है। राग-द्वेष से त्रस्त प्राणी अनेक योनियों में परिभ्रमण करते हैं तथा शाश्वत सुखों से परे रहते हैं। आत्मा अनादि काल से इनसे युक्त रही है। अतः राग-द्वेष के विजेता बनने का प्रयास करना चाहिए। राग-द्वेष जैसे मंद, मध्यम और तीव्र होते हैं, वैसे ही कर्मों का बन्ध भी मन्द, मध्यम और तीव्र होता है।

संसार में रहते हुए भी "जल कमलवत्" जीवन जीते हुए राग और द्वेष से बचकर कर्म-बंधन की प्रक्रिया को शिथिल करने का सुप्रयास करना चाहिए।

-पूर्व न्यायाधिपति राजस्थान उच्च न्यायालय
संरक्षक- अ.भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ
"चन्दन", बी-२ रोड़, पावटा, जोधपुर-३४२०१०

सफलता का रहस्य

दिलीप जैन

प्रसिद्ध लेखक जार्ज बर्नाड शॉ एक समय दरिद्रता पूर्ण जीवन व्यतीत करने वाले व्यक्ति थे। प्रारम्भ में उनकी लिखित पुस्तकों को प्रकाशित करने के लिए कोई भी प्रकाशक तैयार नहीं हुआ, परन्तु इससे बर्नाड शॉ हतोत्साहित नहीं हुए। उन्होंने अपना लेखन कार्य पूर्वानुसार लगन सहित जारी रखा। आखिर उनकी एक पत्र संचालक से जान पहचान हुई। वह उनकी रचनाओं को पढ़कर लेखनशैली एवं विषयवस्तु पर मुग्ध हो गया। धीरे-धीरे जार्ज बर्नाड शा की पूरी पुस्तकें प्रकाशित हो गई। अब वे प्रकाशक भी उनकी खुशामद करने लगे जिन्होंने पहले पुस्तक प्रकाशित करने से मना कर दिया था।

सम्यक्रूपेण श्रम करने वाला जीवन में सफलता अवश्य प्राप्त करता है।

-साधना भवन, ए-९, बजाज नगर, जयपुर (राज.)

ईर्ष्या का दंश

आचार्य श्री विजयरत्नसुन्दरजी म.सा.

पदे पदे जीवपराभिभूतिम्,
पश्यन् किमीर्ष्यस्यधमः परेभ्यः।
अपुण्यमात्मानवैषि किं न,
तनोषि किं वा नहि पुण्यमेव।।

हे जीव (आत्मन्)! कदम-कदम पर पर की अभिभूति (पर के वैभव) को देखता हुआ (अपने पराभव को देख) अधमपणे से पर से ईर्ष्या क्यों करता है? तेरी स्वयं की आत्मा को निष्पुण्यक क्यों नहीं समझता? या पुण्य क्यों नहीं बढ़ाता?

ऐसी साड़ी खोज रही हूँ कि.....

'आइये! पधारिए'

'तुम दुकान में साड़ियाँ तो रखते हो न?'

'क्यों नहीं?'

'हल्की या भारी?'

'दोनों तरह की'

वह बहन कपड़े की दुकान में चढ़ी। वातानुकूलित गाड़ी में वह बहन दुकान में आयी है, यह व्यापारी के ख्याल में आ गया था और इसलिये उसे श्रद्धा थी (विश्वास था) कि १०-१५ हजार की बिक्री तो आज होगी। उसने खूब रसपूर्वक उस बहन को साड़ियाँ बताना शुरू किया।

'यह साड़ी कितने की?'

'३ हजार की'

'और यह साड़ी?'

'साढ़े ६ हजार की'

'और इससे भी कोई भारी साड़ी है?'

'हाँ, यह साड़ी है ९ हजार की'

'दूसरी कोई?'

'यह भारी साड़ी है १४ हजार की'

उस बहन के चेहरे पर इतनी ऊँची साड़ियाँ देखकर भी लेश मात्र भी प्रसन्नता व्यापारी को नहीं दिखायी दी तो व्यापारी ने उस बहन को पूछ लिया, 'बहनजी! आखिर आप कैसी साड़ी खोज रही हैं?'

'जिसे देखकर मेरी पड़ोसन ईर्ष्या से खड़ी की खड़ी जल उठे।'

वह बहन जवाब देकर दुकान से निकल पड़ी।

व्यापारी तो आँखे फाड़कर उसे देखता रहा।

✦ ✦ ✦ ✦ ✦

मेरे स्वयं के सिरदर्द के कारण मेरी आँख में आँसू निकलते हो तो उसका इलाज हो सकता है। झोंपड़पट्टी विस्तार में रहने के कारण मेरा मन उद्विग्न रहता है तो उसका भी रास्ता निकल सकता है। दरिद्रता के कारण झेलनी पड़ती जालिम असुविधा मेरे दुःख का कारण बनती हो तो यह समस्या हल हो सकती है। मित्रों ने मेरे साथ बोलना बंद कर दिया, कारण मैं अकड़ता हूँ तो मेरी यह अकड़ाई भी दूर हो सकती है। मुझे नौकरी नहीं मिलने के कारण मेरा मन व्यथित रहता हो तो यह व्यथा भी दूर की जा सकती है।

पर,

दूसरों की प्रसन्नता मेरी उद्विग्नता का कारण बन रही हो तो इस उद्विग्नता को टालने का कोई उपाय नहीं है। दूसरों की श्रीमंताई ही मेरी हताशा बन गयी हो तो इस हताशा से मुक्त होने का कोई इलाज ही नहीं है। दूसरों का आलीशान बंगला मेरे जीवन का मजा बिगाड़ रहा हो तो इस मजे को वापिस लाने का कोई उपाय नहीं है। दूसरों की कमाई मेरे लिए अफसोस बन रही हो तो इस अफसोस से मन को मुक्त करने का कोई रास्ता नहीं है। मित्र की तन्दुरुस्ती मेरे मन की बीमारी बन रही है तो इस बीमारी का कोई इलाज नहीं है।

सार में,

स्वयं का दुःख मेरे लिए दुःख रूप बन रहा है तो इस दुःख से मुक्त होना मेरे लिये कदाचित् शक्य है, पर दूसरों का सुख मेरा दुःख बन रहा है तो इस दुःख से मुक्त होना मेरे लिए सर्वथा अशक्य है।

ग्रंथकार ने इस श्लोक में यही बात कही है। 'तेरे से ज्यादा कोई सुखी है, ज्यादा रूपवान है, ज्यादा श्रीमंत है, तेरे से अच्छा कोई गायक है, ज्यादा अच्छा लेखक है, बहुत अच्छा वक्ता है, तुझे मिलते मान-सम्मान से किसी को बहुत मान-सम्मान मिल रहा है, तेरे वक्तव्य के बाद मिलती तालियों से दूसरे को मिलती तालियां ज्यादा हैं तो इसमें तू इतना अधिक दुःखी क्यों है? तू इतना हताश और इतना उद्विग्न क्यों है? तेरे जीवन को तू पूरा निष्फल क्यों मान बैठा है? तेरे से आगे रहे हुए से ईर्ष्या कर तू बल (जल) क्यों रहा है?

कारण कि इसमें तो एक ही बात है? तेरे पास पुण्य की जो पूंजी है,

इससे उसके पास पुण्य की पूंजी अधिक है। अथवा तो पुण्य की पूंजी को बाहर निकालने का तेरा जितना पुरुषार्थ है इससे अधिक पुरुषार्थ उसका है और इस हिसाब को सामने रखकर यह भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में आगे है। उससे ईर्ष्या करने की क्या जंरूरत है? अथवा तो उसके विकास को देखकर तेरे को अफसोस क्यों करना पड़ रहा है?

कैसा विचित्र है अपना मन?

यह बाहर में बात दूसरों के उत्कर्ष की करता है और अंदर में इच्छा करता है अपकर्ष की। किसी का नया बंगला देखकर वह बाहर से देता है धन्यवाद, पर अन्दर से इच्छा करता है कि बंगला कैसे भी टूट जाय? प्रतिस्पर्धी को विजय के लिए बधाई देते वह थपथपाता है उसकी पीठ, पर अंदर से वह जल जलकर राख हो जाता है। श्रीमंताई का पुरस्कार मिलते लोगों का वह बाहर में करता है बखाण, पर अंदर में विचार करता है कि कागला दही की थर ले गया।

यह सब क्या है? केवल ईर्ष्या। ईर्ष्या के ही ये सब रूप हैं। बाहर से यह कुछ कर सकती नहीं, पर अंदर से यह चित्ततंत्र को भयंकर हद तक कलुषित करती रहती है और इसका फल होता है कि यह दूसरों के सुख में तो कुछ कमी नहीं कराती, पर स्वयं के पास जो भी सुखशांति, स्वस्थता या प्रसन्नता है, उनमें क्रमशः कमी लाए बिना नहीं रहती ।

और,

ईर्ष्या में रही हुई एक भयंकर क्रूरता कदाचित् हमारी नजर में नहीं आती, पर इस क्रूरता को एक बार बराबर देखकर समझ लेना आवश्यक है, जिससे ईर्ष्या करते मन लाख बार विचार करे(सोचे)।

दूसरों का सुख मेरा दुःख, दूसरों का विकास मेरा विनाश, दूसरों का उत्कर्ष मेरा अपकर्ष, दूसरों की प्रसन्नता मेरी उद्विग्नता, दूसरों की प्रशंसा मेरी हताशा, यह है ईर्ष्या का स्वरूप। इसका अर्थ क्या है? यही है कि ईर्ष्या सतत यही इच्छा करती है कि मेरे आस-पास में मेरे जैसा सुखी तो कोई नहीं होना चाहिए। मेरे से अधिक दुःखी हो इसमें तो बाधा नहीं, पर मेरे से ज्यादा सुखी तो कोई होना ही नहीं चाहिए।

हृदय की यह क्रूरता क्या जीवित रखने की है? चित्त की यह निष्ठुरता क्या जीवित रखने की है? दिल की यह संवेदनहीनता क्या जीवित रखने की है? जो हृदय स्वयं के आसपास सतत दूसरों को दुःखी देखने की ही इच्छा करता है, दूसरों का विनाश अथवा अल्पविकास ही चाहता है, दूसरों की निंदा या

अल्पप्रशंसा की इच्छा करता है, दूसरों की दरिद्रता या अल्पश्रीमंताई ही मांगता है। वह हृदय नहीं, एक तरह की छुपी आग है जो धर्म के छोटे भी अंकुर को उगने नहीं देती।

प्रश्न– वास्तविकता यह है कि समझकर भी किसी का बहुत विकास देखते हैं तो चित्त ईर्ष्याग्रस्त बन जाता है। कौनसा चिन्तन आत्मसात् करें कि इससे बच जाएँ?

उत्तर– एक चालू व्यवहार के प्रसंग से यह बात समझिये।

मानों कि जवाहरात (आभूषणों) की विशाल दुकान में एक दरवाजे से तुम अंदर चले गये और दूसरे दरवाजे से तुम्हारा मित्र अंदर आ गया। एक तीसरा भी तुम्हारा मित्र है जो कि तीसरे दरवाजे से अंदर आ गया।

दुकान में एक घंटा बिताने के बाद तुम तीनों मित्र बाहर आये और एक होटल में नाश्ता करने साथ में गए। टेबल पर बैठने के पश्चात् तुम तीनों के बीच में बातचीत चली है। तुमने पूछा तुम्हारे मित्र से–

'दोस्त! क्या खरीदा?'

'नेकलेस' ऐसा कहकर वह तुम्हें नेकलेस बताता है और तुम्हें भी यही प्रश्न पूछता है कि जो तुमने पूछा था–

'तूने क्या खरीदा?'

'अंगूठी' ऐसा कहकर तुमने उसे जेब में रही अंगूठी निकालकर बताई।

'पर तू तो बहुत बार कहता था कि मुझे एक सुंदर नेकलेस लेना है तो फिर नेकलेस न लेकर यह अंगूठी क्यों लेकर आए?'

'लेना था एक नेकलेस, पर व्यापारी ने उसकी जो कीमत कहीं, मेरे पास इतने रुपये नहीं थे, फिर इतने रुपयों में अंगूठी आ रही थी, यह खरीद ली।'

और तुम्हारे बीच चली यह बातचीत सुन तीसरा मित्र हंसते-हंसते बोला, मुझे तो ऐसे के ऐसे बाहर निकाल दिया, क्यों कि मेरी जेब में पैसे ही नहीं थे।

यह दृष्टान्त इतना ही कहता है कि दुकानदार ने तुम तीनों में से एक भी मित्र के प्रति पक्षपात नहीं किया। कारण कि वह तो धंधे के लिए बैठा है। एक को नेकलेस दी, तुमको एक अंगूठी दी और तीसरे को कुछ भी नहीं दिया। कारण कि तुम्हारे मित्र के पास जो रकम थी उससे नेकलेस खरीदा जा सकता

था। तुम्हारे पास जो रकम थी उससे अंगूठी खरीदी जा सकती थी और तीसरे मित्र के पास कुछ भी रकम थी नहीं, इसलिए उसके कुछ खरीदने का प्रश्न ही नहीं रहता।

पर,

मैं तुम्हें पूछता हूँ, तुम्हारे मित्र को नेकलेस मिली, इस बारे में तुम व्यथित हो? नहीं, बिल्कुल नहीं, कारण कि तुम्हें ख्याल है कि उसके पास पैसे बहुत थे, इसलिए उसे नेकलेस दिया। तुम्हें नेकलेस के बदले अंगूठी मिली तो तुम दुकानदार पर गरम हुए? नहीं, बिल्कुल नहीं, कारण कि तुम्हें ख्याल है कि उसकी तो मेरे को नेकलेस देने की तैयारी थी, पर मेरे पास नेकलेस खरीदने जितने रूपये नहीं थे।

बस,

मन को ईर्ष्या से मुक्त बनाने के लिए यही विचारसरणि असरकारक बनती है। यही तो कर्म सत्ता है, व्यापारी जैसी। **जिसको जो माल खरीदना हो उसको वह माल देने को तैयार है। उसकी शर्त इतनी ही है कि उस व्यक्ति के पास इतनी पुण्य की पूंजी होनी चाहिए।** 'यदि पुण्य उसके पास अंगूठी खरीदने जितना ही है तो मैं उसे लाख धमचक करने पर भी नेकलेस देती ही नहीं और पुण्य जो उसके पास नेकलेस खरीदने जितना है तो उसको नेकलेस देने में पल भर भी विलम्ब करती नहीं और पुण्य की पूंजी उसके पास है ही नहीं तो प्रचंड पुरुषार्थ करे तो भी उसे कुछ भी देने वाली नहीं, यह है कर्मसत्ता की स्पष्ट निष्पक्षपातता।"

तुमने किसी को तुम्हारे से अधिक सुखी देखा तो इसमें ईर्ष्या करने की क्या जरूरत है? यही समाधान तुम्हें कर लेना है कि ' उसके पुण्य मेरे से अधिक है।'

बाकी,

जो भी आत्मा यह समाधान नहीं कर सकती और अपने चित्त को ईर्ष्याग्रस्त ही बनाए रखती है, उस आत्मा की स्थिति तो यह होती है कि ईर्ष्या का पाप उसके स्वयं के हाथ में रहा हुआ सुख भी गुमा बैठता है। भोजन करते हुए भी उसके शरीर में रक्त नहीं बनता। सभी अनुकूलता होते हुए भी उसका मन प्रसन्न नहीं रहता। धंधे में पूरती कमाई होते हुए भी आनंद नहीं रहता। अनुकूल परिवार होते हुए भी उसके मन में शांति नहीं रहती।

एक ओर बाहर से उसकी यह स्थिति होती है तो दूसरी ओर चित्त संतत ईर्ष्या से व्याप्त रहने के कारण आत्मा चिकने अशुभ कर्मबन्ध करती

रहती है। ईर्ष्या के मूल में क्रूरता रहने के कारण ऐसी आत्मा भवांतर में कदाचित् ऐसे क्रूर भवों में ही रवाना होती है।

पर,

जिस आत्मा के मन में पुण्य की यह गणित बराबर बैठ गयी हो, उस आत्मा की मनःस्थिति तो गजब की उदात्त बन जाती है। वह तो हारती है तो भी प्रसन्न रहती है कारण कि कोई तो जीतता ही है उसकी उसे खबर है। धंधे में कोई नुकसान करता है तो भी स्वस्थ ही रहता है कारण कि किसी ने तो कमाया ही है, इसका उसे ख्याल है। रोग की उपस्थिति में तोबा नहीं करता कारण कि इस जगत में अनेक जीव तंदुरुस्त हैं, इसका उसे आनंद है।

ईर्ष्यालु चित्त स्वयं के सुख को भी गुमा बैठता है और उदात्त चित्त तो दूसरों के सुख को भी अपना बना लेता है। ईर्ष्यालु चित्त दूसरों की प्रसन्नता देखकर स्वयं की प्रसन्नता भी गुमा देता है, हानि का पात्र बनता है और उदात्त चित्त तो अन्य की प्रसन्नता देखकर स्वयं की उद्विग्नता को रवाना करने का लाभ प्राप्त कर लेता है।

ईर्ष्यालु चित्त अन्य के रुदन को स्वयं का हास्य बना देने में रुचि रखता है जबकि उदात्त चित्त तो अन्य के रुदन को स्वयं का रुदन मानकर उस रुदन को दूर करने के प्रयत्नों में व्यस्त रहता है। ईष्यालुचित्त स्वयं की स्वार्थ की रोटी सेकने और अन्य की हानि की चिन्ता रूपी गर्मी चाहता है जबकि उदात्त चित्त तो कष्टों की गरमी में जाते अन्य के परमार्थ की रोटी सिकाने में तत्पर रहता है। ईर्ष्यालु चित्त इसी भव में दुर्गति के त्रास का अनुभव करता है, जबकि उदात्त चित्त तो इसी भव में सद्गति की मस्ती में रहता है। प्रश्न अपने खुद के मन को बदलकर सुधारने का है। शरीर को जलती अग्नि से सतत दूर रखते हुए हम मन को जलती ईर्ष्या की आग के साथ जमाकर रखें तो कैसे चलेगा?

क्या कहूँ?

स्वस्थता शरीर की, प्रसन्नता मन की और पवित्रता आत्मा की, यह तीनों तुम तुम्हारे में कितनी समा सकते हो, इस पर आधारित है। अनुभव कर देखो तो तुम्हें इस बात की प्रतीति हो जाएगी।

कुंटुब का मुख्य व्यक्ति हृदय को उदात्त रखकर स्वयं में कुंटुब के छोटे-मोटे सभी सभ्यों को समा लेता है, उस कुटुंब के मुख्य व्यक्ति का चेहरा तुम देखना, तुम स्तब्ध रह जाओगे। उसके मन की प्रसन्नता तुम अनुभव करना, तुम आश्चर्यचकित रह जाओगे। उसकी आत्मा की पवित्रता निहारना,

तुम्हें अहोभाव उत्पन्न होगा।

ईर्ष्यालु चित्त के लिए यह वास्तविकता स्वप्नवत् ही बनी रहती है। कारण कि यह स्वयं में जगत को तो नहीं ही समा सकता, मित्रों को नहीं ही समा सकता, पर स्वयं के (खुद के) निकट के स्वजनों को भी यह नहीं समा सकता। यदि यह बाप के स्थान में हो तो बेटे का विकास नहीं सह सकता। यदि यह पति के स्थान में हो तो पत्नी की प्रशंसा नहीं सह सकता। जो यह भाभी के स्थान में हो तो नणंद के विकास को नहीं सह सकता। जो यह सासू के स्थान में हो तो बहू के उत्कर्ष को सहन नहीं कर सकता।

ऐसा चित्त शरीर को रोगों का शिकार नहीं बनावे तो ही आश्चर्य, मन को सतत उद्विग्न और व्याकुल नहीं रखे तो ही आश्चर्य। आत्मा को अपवित्र न बनाये तो ही आश्चर्य। इस भव में ही ईर्ष्या ऐसी स्थिति कर डालती है, परभव में उसका यह कितना कर देगी? भवान्तर में उसे इन दुःखों में तो झोंक ही देगी, पर दोषों से भी उसकी आत्मा को व्याप्त करके ही रहेगी।

बचा लेना है आत्मा को इस जालिम अपाय से? तो आओ, नागिन से भी अधिक डंकीली और आग से भी अधिक विनाशक ऐसी इस ईर्ष्या को चित्त में कोई स्थान न दें।

दूसरों से होते पराभव में कोई लाचारी नहीं दिखानी और पुण्य के जोर पर दूसरों का पराभव कभी भी नहीं चाहना। अन्य के विकास को देखकर चित्त को प्रसन्न किए बिना नहीं रहना और खुद के विकास के लिए प्रयत्नशील बने बिना नहीं रहना।

और अंतिम महत्त्व की बात–

ईर्ष्या की त्रास से मुक्त होने को एक छोटा निर्धारण कर लो। मुझे सुखी होना है तो मुझे दूसरों को सुखी देखना होगा। मुझे पेट भरना है तो दूसरों का पेट मुझे भरना होगा। मुझे प्रसन्न रहना है तो दूसरों की प्रसन्नता मुझे निहालनी होगी।

मुझे प्रेम चाहिए तो दूसरों को प्रेम मुझे देना होगा।
मुझे जीवन जीना है तो दूसरों को मुझे जीवन देना होगा।
मुझे हंसते रहना है तो दूसरों को मुझे हंसाते रहना होगा।

और मुझे परमगति में जाना है तो दूसरे की परमगति में सहयोगी बनना होगा।

बस, यह निर्धारण, इसके अमल की दिशा में प्रयाण और इसी पल ईर्ष्या को आखिरी विदाई।

-हिन्दी रूपान्तरण : एक श्राविका

त्याग

श्री पी.एम. चोरड़िया

(1)

1. **प्रश्न**— त्याग किसे कहते हैं?

उत्तर—१.पर द्रव्यों को पर जानकर,पहचानकर उनसे अलग हो जाना त्याग है।

२.अनासक्त भाव के साथ पदार्थ का त्याग किया जाए वही सही अर्थों में त्याग है।

३.वस्तु को हाथ से छोड़ देने के साथ-साथ मन से भी छोड़ देना सच्चा त्याग है।

2. **प्रश्न**— ऐसी कुछ वस्तुएँ बताइये जिनका त्याग होता है, दान नहीं?

उत्तर— राग-द्वेष, माँ-बाप, स्त्री-पुत्र, परिवार को छोड़ा जा सकता है, उनका दान नहीं किया जा सकता।

(2)

1. **प्रश्न**— भोग और त्याग के मार्ग में प्रतिस्पर्धा का क्या स्थान है?

उत्तर— भोग में स्पर्धा हो सकती है। एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति से ज्यादा भोग सामग्री प्राप्त करने की चेष्टा कर सकता है, पर त्याग के मार्ग में प्रतिस्पर्धा नहीं है। वहाँ तो मनुष्य को स्वयं को खपना पड़ता है और वह भी अपने स्वयं के परम उत्थान के लिए।

2. **प्रश्न**— त्याग के अभाव में क्या होता है?

उत्तर— त्याग के अभाव में स्वार्थ व संकीर्णताएँ, बिखराव, टूटन, परस्पर मनमुटाव, संघर्ष, द्वन्द्व व द्वेष जीवनचर्या में प्रवेश कर जाते हैं। मैत्री कटुता में बदल जाती है और जीवन सारा तनावयुक्त हो जाता है।

3. **प्रश्न**—त्याग कब सार्थक होता है?

उत्तर—जब हमें भेदविज्ञान अर्थात् सद्-असद् के जानने और पहिचानने की विवेक बुद्धि जागृत हो जाए, तब त्याग सार्थक होता है। बोध होने पर अशुभ प्रवृत्तियाँ अपने आप छूट जाती हैं। यही त्याग की सार्थकता है।

(3)

1. **प्रश्न**—'निजशुद्धात्मपरिग्रहं कृत्वा बाह्याभ्यन्तरपरिग्रहवृतिस्त्यागः-प्रवचनसार इसका अर्थ क्या है?

उत्तर—निज शुद्धात्म के ग्रहणपूर्वक बाह्य और आभ्यन्तर परिग्रह से निवृत्ति त्याग है।

2. **प्रश्न**—णिव्वेगतियं भावइ मोहं चइऊण सव्वदव्वेसु।
जो तस्स हवे च्चागो इदि भणिदं जिणवरिंदेहिं। -बारस-अणुवेक्खा(द्वादशानुप्रेक्षा)

उपर्युक्त गाथा का भावार्थ क्या है?

उत्तर— जो जीव सम्पूर्ण परद्रव्यों से मोह छोड़कर उदासी रूप परिणाम रखता है, उसके त्याग धर्म होता है।

3. **प्रश्न**—वत्थगंधमलंकारं, इत्थीओ सयणाणि य।
अच्छंदा जे न भुंजन्ति, न से चाइत्ति वुच्चई।। -दशवैकालिक सूत्र,२.२

उपर्युक्त गाथा का भावार्थ कीजिए।

उत्तर— जो पुरुष पराधीनतावश वस्त्र, गन्ध, आभूषण, स्त्री, शयन आदि विषयों का सेवन नहीं करता, वह त्यागी नहीं कहलाता। अपनी इच्छा से विषयों का त्याग करने वाला ही वास्तव में सच्चा त्यागी कहलाता है।

(4)

1. **प्रश्न**—कुछ ऐसी वस्तुएँ बनाइये जिनका त्याग भी हो सकता है और दान भी?

उत्तर— औषधि, आहार, रुपया-पैसा आदि का त्याग भी हो सकता है और दान भी दिया जा सकता है।

2. **प्रश्न**—ऐसे उदाहरण दीजिए, जिनका दान दिया जा सकता है, लेकिन उन्हें त्यागा नहीं जा सकता?

उत्तर—ज्ञान और अभय का दान दिया जा सकता है पर वे त्यागे नहीं जाते।

3. **प्रश्न**— दान और त्याग में क्या फर्क है?

उत्तर— १. दान पुण्य को तो पैदा कर सकता है लेकिन आत्मस्वरूप को प्रकट नहीं कर सकता। त्याग यदि बिना किसी प्रलोभन एवं निर्मल भावों के साथ किया जाए तो आत्मा से लगे हुए काषायिक आवरणों को हटाने की क्षमता रखता है।

२. दान तो वित्त एवं पदार्थ का होता है, जबकि त्याग अशुभ वृत्तियों(काम, क्रोध, मान, माया, लोभ आदि) का किया जाता है।

३. त्याग में दो ही चीजें होती हैं- एक वृत्तियाँ और दूसरी इन वृत्तियों को त्यागने वाला व्यक्ति, जबकि दान में तीन तत्त्व होते हैं- एक जिस वस्तु का दान किया जा रहा है, दूसरा जिसे दान दिया जा रहा है और तीसरा जो दान कर रहा है।

(5)

1. **प्रश्न**— जे य कंते पिए भोए, लद्धे विपिट्ठि कुव्वई।
साहीणे चयइ भोए, से हु चाइत्ति वुच्चई।। -दशवैकालिक सूत्र २.३

उपर्युक्त गाथा का भावार्थ बताइये।

उत्तर– वही सच्चा त्यागी कहलाता है जो अपने को प्रिय, प्रियतर और प्रियतम लगने वाले मनोहर भोग प्राप्त होने पर भी स्वाधीनता पूर्वक उनको पीठ दिखा देता है अर्थात् सब प्रकार से प्राप्त भोगों को त्याग देता है।

2. **प्रश्न**–भोगी तिरा न तिरसी भाई, बिना त्याग रुलसी जग मांही।।

उपर्युक्त पद्य का सार क्या है?

उत्तर–यदि संसार सागर से तिरकर मोक्ष प्राप्त करना चाहते हो, तो भोग को छोड़कर त्याग का मार्ग स्वीकार करो।

(6)

1. **प्रश्न**–त्याग को नमस्कार करने से क्या होता है?

उत्तर–त्याग को नमस्कार करने से त्याग के प्रति श्रद्धा बढ़ती है, सद्गुणों का विकास होता है, त्याग प्रवृत्ति की भावना जाग्रत होती है, कर्मों की निर्जरा होती है और जीवन शुद्ध तथा आचरण अच्छा बनता है।

2. **प्रश्न**– त्यागी कितनी तरह के होते हैं?

उत्तर–त्यागी दो तरह के होते हैं-

१. मूल पच्चखाणी- जो हिंसा, असत्य, चोरी, कुशील और परिग्रह इन पाँचों पापों का त्याग करते हैं।

२. उत्तर पच्चक्खाणी- जो नवकारसी, पोरसी, उपवास, आयंबिल, ऊणोदरी आदि करते हैं तथा भोग और उपभोग को छोड़ते या उनकी मर्यादा करते हैं, वे उत्तर गुण पच्चक्खाणी हैं।

3. **प्रश्न**–श्रमण का द्रव्य त्याग और भाव त्याग क्या है?

उत्तर–आगार जीवन का सामान्य वेष तथा घर-परिवार का परित्याग करना, अणगार संघ के हर सदस्य का द्रव्य त्याग है और शारीरिक-मानसिक ममत्व का परित्याग कर अप्रमत्त भाव से साधना में संलग्न रहना भाव-त्याग है।

(7)

1. **प्रश्न**–दशार्णभद्र राजा ने अपने त्याग के द्वारा इन्द्र को किस प्रकार पराजित किया?

उत्तर– देवों द्वारा रचित वैभव और प्रदर्शन को देखकर दशार्णभद्र राजा का भौतिक वैभव प्रदर्शन फीका हो गया। उसका अहं समाप्त हो गया। अपने आत्म- सम्मान की रक्षा करने हेतु वे भगवान महावीर के समक्ष.दीक्षित हो गए। उनके इतने बड़े त्याग को देखकर इन्द्र दशार्णभद्र के चरणों में झुककर कहने लगा- ''आप महान् हैं। आपने त्याग का महान् आदर्श उपस्थित किया

है। भौतिक-स्पर्धा में मैंने आपको पराजित अवश्य कर दिया, पर आपके त्याग के समक्ष मैं पराजित हूँ, आपकी आशातना के लिए क्षमाप्रार्थी हूँ।"

2. **प्रश्न**– त्याग की सही प्रतिष्ठा कब बनी रहेगी?
उत्तर–साधु संत त्यागी होते हैं, इसलिए उनके चरणों में हम लोग झुकते हैं। साधु यह नहीं चाहते कि हम उनके पैरों में पड़ें। उनकी दृष्टि में इससे उनका कोई महत्त्व नहीं बढ़ता है। यदि वे ऐसा चाहते हों तो उनकी साधना में कमी आ जाती है। यह तो व्यक्ति की नम्रता है। त्यागी तो सभी परिस्थितियों में समभाव में रहते हैं तभी त्याग की सही प्रतिष्ठा समाज में बनी रह सकती है।

3. **प्रश्न**–साधना में त्याग का क्या महत्त्व है?
उत्तर–साधना में त्याग का विशेष महत्त्व माना गया है। बिना त्याग के कैसी भी साधना पूर्णता प्राप्त नहीं कर सकती। जब आत्मिक गुणों का त्याग के साथ संबंध जुड़ता है तो त्याग और तप के प्रभाव से साधना का रूप उज्ज्वलता से निखरने लगता है। त्याग के अभाव में स्थायित्व नहीं आता।

-89, Audiappa Naicken Street, Chennai-79

बोध कथा

सह अस्तित्व

किसी स्थान पर विशाल भवन का निर्माण हो रहा था। निर्माण-स्थल के समीप ही लगा हुआ था–ईंटों का एक ढेर। ईंटों के ढेर में जमी ईंटों ने कहा– गगनचुम्बी अट्टालिकाओं का निर्माण हमारे अस्तित्व पर ही आधारित हैं। भवन जब बनकर तैयार हो जायेगा, निस्संदेह उसके निर्माण का श्रेय हमें ही मिलेगा।

मिट्टी-गारे ने ईंटों की यह गर्व भरी बातें सुनी तो रहा न गया। वह बोली, तुम झूठ बोलती हो। क्या तुम नहीं जानती कि एक सूत्र में पिरोकर ईंट से ईंट जोड़कर इस भवन को सुदृढ़ बनाने का श्रेय तो हमें ही हैं। मेरे अभाव में तो तुम्हारें ये ढेर एक ठोकर मारकर ही गिरा दिए जा सकते हैं।

किवाड़ और खिड़कियों ने इसका प्रतिवाद किया। यह तो सभी जानते हैं कि तुम ईंटों को जोड़-जोड़कर दीवारें खड़ी करती हो, पर उस मकान में खिड़की- दरवाजे न रहेंगे तो पूछेगा कौन ? उसमें रहने के लिये जायेगा कौन ? शिल्पी जो इन सबकी बातें सुन रहा था, वह बोला– "आप सबका भले ही कितना ही सहयोग क्यों न हो, परन्तु जब तक मेरा हाथ न लगे, सब अपने-अपने स्थान पर ही पड़े रहेंगे।"

अब भवन की बारी थी। भवन ने जो कुछ कहा वह एक स्वीकार्य सत्य था। भवन बोला–"सबका महत्त्व है, परन्तु सबसे महत्त्वपूर्ण है– सह-अस्तित्व। सह अस्तित्व के अभाव में किसी का कोई व्यक्तिगत महत्त्व नहीं है, इसलिये आपको अपना झूठा अभिमान छोड़कर सहयोग का महत्त्व समझना चाहिये।

- प्रकाश गुन्देचा, जालोरी गेट के अन्दर, जोधपुर (राज.)

संस्मरण

हांगकांग में बढ़ती धार्मिक रुचि

श्री जितेन्द्र डागा

प्रस्तुत संस्मरण भौतिक विकास एवं सुख-सुविधाओं से सम्पन्न रत्न पारखियों द्वारा धर्मरत्न के प्रति आकर्षण, लगन एवं पुरुषार्थ की झांकी प्रस्तुत करता है। संस्मरण के लेखक सतत स्वाध्यायी युवारत्न श्री जितेन्द्र जी डागा रत्न व्यवसाय के प्रयोजन से हांगकांग जाते रहते हैं। उन्होंने अ.भा. श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड की 19 जनवरी 2003 को आयोजित परीक्षा के पूर्व एवं इस दौरान हांगकांग में व्यवसायरत श्रावक- श्राविकाओं में धर्म के प्रति वर्द्धमान आस्था एवं लगन का जो अनुभव किया, उसे उन्होंने अपने शब्दों में उतारा है। उल्लेखनीय है कि आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड की परिकल्पना के मूल विचार श्री जितेन्द्र जी डागा (सुपुत्र श्री विमलचन्द जी डागा) के उर्वर मस्तिष्क में उत्पन्न हुए थे, जो शनैः शनैः आज विशाल मूर्तरूप ले चुके हैं। हांगकांग में बने धार्मिक माहौल से अन्य क्षेत्र भी प्रेरणा ले सकें तथा आधुनिक भौतिक एवं अंग्रेजी–माहौल में रह रहे देश–विदेश के बालक, युवक, अभिभावक अपने यहाँ आने वाली समस्याओं के निराकरण हेतु सन्नद्ध हो सकें, इसी दृष्टि से यहाँ संस्मरण का प्रकाशन किया जा रहा है। *-सम्पादक*

हम सभी सुख के आकांक्षी हैं। सुख की दौड़ में देश के सुदूर कोनों में ही नहीं, अपितु व्यक्ति विदेश तक भी पहुंच जाता है। इस दौड़ में वह अपनी धरा, संस्कृति को बहुत पीछे छोड़ चला जाता है। पर कुछ ही समय पश्चात् जो स्वाभाविक शान्ति उसे अपनी संस्कृति एवं आचार-विचार में प्रतीत होती है, पाश्चात्त्य संस्कृति में उसका अभाव स्पष्टतः अनुभव होता है।

तब मन में ऊहापोह होता है और आने वाली पीढ़ी को वे प्रवासी वही माहौल देना चाहते हैं जो कि उन्हें बाल्यकाल में अभिभावकों से प्राप्त हुआ। संतों का सान्निध्य, तत्त्वों की जानकारी, प्रभु महावीर का दिव्य संदेश सभी से नवपीढ़ी को अवगत कराने की भावना बलवती हो जाती है। प्रवासी भारतीय तब आर्य क्षेत्र के निवाससियों के भाग्य को सराहने लगते हैं, जहाँ धार्मिक माहौल होता है। उनके हृदय में इस माहौल की प्यास होती है। प्रबुद्ध आचार्य के शब्दों में उनके हृदय की अभिव्यक्ति (इस रूप में कही जा सकती है)-

ओ श्रवणा
कितनी बार
श्रवण किया
ओ मनोरमा
कितनी बार स्मरण किया
कब से चल रहा है
संगीत–गीत यह

कितना काल व्यतीत हुआ
पर, भीतरी भाग भीगे नहीं
दोनों अंग बहरे
कहाँ हुए
हरे भरे।
हे नीराग हरे
अब बोल नहीं
माहौल मिले! माहौल मिले।

चर्चा अनेक बार होती है कि यह माहौल कैसे बने। किन्तु चर्चा को चर्या में बदलना बहुत कठिन कार्य है। और खासतौर से आर्य धरा के बाहर जहाँ शिक्षा का माध्यम ही हिन्दी, प्राकृत-संस्कृत से भिन्न कोई अन्य भाषा ही है, मुख्यतः अंग्रेजी। नव पीढ़ी को हिन्दी में लिखना-पढ़ना नहीं आता। ऐसे में समस्या अति विकट हो जाती है।

❖ ❖ ❖ ❖ ❖

इसी समस्या से जूझ रहे हांगकांग जैन संघ ने चर्चा को चर्या में बदला। उन्हें निमित्त मिला अखिल भारतीय श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड का।

बालकों में संस्कार का एक माहोल बने, इस हेतु अभिभावकों ने निश्चय किया कि वे स्वयं परीक्षार्थी बनेंगे। धनार्जन में जिन्होंने अपना कौशल दिखाया वे अब विद्यार्जन को तत्पर हुए। फार्म भरने के साथ ही अध्ययन का सिलसिला चालू हुआ। नियमित कक्षाएँ सुबह के समय चलने लगीं। स्वस्थ प्रतिस्पर्धा (Helathy Competition) एवं तत्त्वों की जिज्ञासा ने वातावरण को इतने परवान पर पहुंचाया कि हीरों के व्यापारी, रत्नत्रय की चर्चा के सामने द्रव्य रत्नों की आभा को अध्ययन के समय भूल जाते थे। रत्नों के व्यापारियों को सुदर्शन के शीलरत्न के सामने स्वयं के द्रव्य रत्न फीके लगने लगे थे। एक-दूसरे को उत्साहित करते, तो कभी मनोविनोद भी करते। जब अजय जी पारख पुस्तक में से भगवान के केवलज्ञान स्थल के वर्णन को अक्षरशः बोलते तो सभी कहते भाई एक-एक शब्द वैसे लिखोगे तो लोग कहेंगे हांगकांग में नकल के लिए किताब खुल गई दिखती है। जब चर्चा में यह आता कि ''विवेक धर्म की नींव है'' तो निगाहें विवेक जी संचेती (राकी) की तरफ घूम जाती हैं, सभी कहते भाई, आपका तो धर्म सभा में होना जरूरी है। सामान्य परिचय से बढ आत्मीयता एवं प्रेम का वातावरण बनने लगा। धीरे-धीरे वातावरण में धार्मिक गोष्ठी का रूप ले लिया।

❖ ❖ ❖ ❖ ❖

ऐसा नहीं था कि कोई विघ्न नहीं आये। आये, पर उत्साह व उमंग

सभी विघ्नों को पार करते चले गये। इस कारवाँ से कोई पीछे भी हटता, कोई व्यवसाय की व्यस्तता का बहाना बनाता, तो कोई याद न होने का। हाँ, पीछे हटने वालों ने कभी आगे बढ़ने वालों को हतोत्साहित नहीं किया। उनकी सहृदयता भी प्रशंसनीय है।

कभी अफवाह भी चली कि अमुक स्थान पर तो वृद्ध औरतें ही परीक्षा देती हैं व किताब खोल आपस में बताती रहती हैं, पर रणबांकुरे इन अफवाहों से विचलित नहीं हुए। आगे बढ़ते गये, मुख्य कारण था नारी शक्ति। धर्मपत्नियों ने नाम को सार्थक किया व अपने जीवन-साथियों को धर्ममार्ग पर प्रशस्त करने में अहम् भूमिका अदा की।

माहौल को बनाने में राजेन्द्र जी डागा कोई कसर नहीं छोड़ते थे। कभी मद्रास का उदाहरण देते, तो कभी शिक्षण की आवश्यकता पर जोर देते। अरुण जी बम्ब एवं अजय जी गांधी ने व्यवस्थाओं में उन्हें सक्रिय सहयोग दिया। सभी के लिये प्रेरणास्रोत रहे अनिल जी खटोड़ (जो माहेश्वरी होते हुए भी कई जैनियों के लिए आदर्श हैं) ने जिस लगन-अनुशासन से परीक्षा हेतु चरण बढ़ाये, उस प्रयत्न ने सभी को एक नई स्फूर्ति दी।

❖ ❖ ❖ ❖ ❖

परीक्षा का दिन १९ जनवरी नजदीक आने लगा। अब धड़कनें तेज होने लगी। प्रतिष्ठा का प्रश्न बनने लगा। अभिभावकों की असली परीक्षा तो बच्चों के सामने थी, जिन्हें वे रोज अध्ययन के लिये प्रेरित करते थे।

अध्ययन गंभीर होता चला गया। इतना कि अब धार्मिक भावनाएँ उभरने लगी। स्तवन 'जरा कर्म देखकर करिये....' ने उन्हें संवेदनशील बना दिया। श्रीमती प्रेरणा जी कोठारी कहने लगी कि पहले मैं रोज बच्चों को गाजर का जूस पिलाती थी, अब गाजर छीलने में ही मन सिहर उठता है। **इस दौरान दिसम्बर 2002 के जिनवाणी के अंक में श्री नितिन सोनी के लेख 'रेस्टॉरेंट का अन्तः सच' को पढ़कर सभी परीक्षार्थियों का हृदय कांप उठा।** प्रायः सभी ने मांसाहारी रेस्टॉरेंट में नहीं जाने का मानस बना लिया। सामायिक-स्वाध्याय के प्रबल प्रेरक, महान प्रभावक आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा. की अनुपम-अनमोल कृति'ओम् शान्ति-शान्ति' के भावों का स्वाध्याय करते उन्हें बोध होने लगा कि शान्ति साधना कैसे होती है? अतुल शान्ति कैसे प्राप्त की जा सकती है?एक श्राविका (नाम लिखना धर्मकार्य में अन्तराय का कारण बन सकता है) कहने लगी कि मैं अपने अवचेतन मस्तिष्क (Sub-conscious) में यह डालने की कोशिश कर रही हूँ कि अमुक समय बाद दीक्षा अंगीकार कर लूँ।

कई जिन्हें मात्र नवकार मंत्र आता था, वे अब सामायिक मूल, तो

कई मूल-अर्थ के ज्ञाता हो गये। नव तत्त्वों से अब वे अपरिचित नहीं थे। जहाँ एक ओर सुनिता जी लुणावत, मंजु जी सुराणा, चन्द्रा जी संचेती आदि पर पूर्व प्रदर्शन की पुनरावृत्ति का दबाव था, तो कई और आगे बढ़ने को आतुर थे। जोधपुर से मॉडल पेपर मंगाये गए। उन्हीं के आधार पर और मॉडल पेपर बने। पूर्व परीक्षाओं (Pre-Examination) का आयोजन हुआ। इस दौरान कभी भी नियम, प्रश्नोत्तर संबंधी कोई भी अड़चन आई तो जोधपुर मुख्य कार्यालय से सम्पर्क करने में हिचकिचाहट नहीं दिखाई। व्यवस्थापक एवं रजिस्ट्रार धर्मचन्द जी जैन एवं उनके सहयोगियों का रुख भी सकारात्मक रहा।

❖ ❖ ❖ ❖ ❖

१९ जनवरी मध्याह्न हांगकांग समयानुसार दो बजे। परीक्षा केन्द्र उपाश्रय ही था। उपाश्रय को देख सहज अनुमान लगाया जा सकता है कि निर्माण करने वालों ने पूरा समय व अर्थ इस कार्य में दिया होगा। स्थल से दृष्टिगोचर होती गगनचुम्बी अट्टालिकाएँ स्थल के ऐश्वर्य को स्पष्ट झलकाती हैं। परीक्षा अधीक्षक थे हांगकांग जैन सेन्टर के अध्यक्ष तपोमूर्ति श्री जगदीशचन्द्र जी नाहटा।

सभी श्रीमन्त एवं प्रचुर भौतिकता में रहने वाली महिलाएँ पंक्तिबद्ध अनुशासित रूप से परीक्षा पत्र का इन्तजार कर रही थी। मन्दिर, स्थानक, तेरापन्थ इन विभिन्न मान्यताओं का भेद वहाँ नहीं था। भारत के विभिन्न प्रान्तों में बाल्यकाल व्यतीत करने वाले उन सभी परीक्षार्थियों ने एक-दूसरे का उत्साह बढ़ाया था। स्वधर्मी वात्सल्य का वह अनूठा दृश्य था। उस क्षण, उन सबकी मात्र एक पहचान थी कि वे जैन हैं, जिन के उपासक हैं, प्रभु महावीर के अनुयायी हैं, सत्य के शोधक हैं।

परीक्षा परिणाम कुछ भी रहे, पर धार्मिक शिक्षण एवं एकरूपता के जिस उद्देश्य से संस्था की स्थापना की गई थी वह सफल होती दिखाई दे रही थी। सहज श्रद्धा उमड़ पड़ी, आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के प्रति, जिनकी पावन प्रेरणा से धार्मिक शिक्षण के क्षेत्र में नये आयाम स्थापित हुए हैं।

और हाँ, यह बात स्पष्ट हो गई कि कितनी ही भौतिक चकाचौंध बढ़ जाये, कितने ही मत-मतान्तर हो जायें, प्रभु महावीर का शासन निराबाध २१००० वर्ष पूर्ण करेगा, क्योंकि सत्य एवं साधना के मजबूत सिद्धान्तों पर इसकी आधारशिला रखी गई है। दुःख-मुक्ति एवं अव्याबाध सुख की प्राप्ति उनके द्वारा प्ररूपित मार्ग से ही संभव है।

-१३७०, ताराचन्द नायक का रास्ता,
जौहरी बाजार, जयपुर

संतोष और महत्त्वाकांक्षा का संबंध

श्रीमती विमला जोटा

संतोष और महत्त्वाकांक्षा दोनों अलग-अलग पहलू है। संतोष में सुख, शांति और मन की स्थिरता है तो महत्त्वाकांक्षा मन की ऊँची उड़ान है, कुछ कर गुजरने की तीव्र अभिलाषा है, निर्धारित लक्ष्य पर पहुंचने का ध्येय है। दोनों पहलू जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में आवश्यक भी हैं। संतोष गंभीर और शांत-सागर के समान है तो महत्त्वाकांक्षा सागर में उड़ती हुई लहरों के सदृश है जो नित्य आगे बढ़ती रहती है। संतोष मन का चैन है, मन का संयम है तो महत्त्वाकांक्षा मन का आविष्कार है। संतोष अध्यात्म है तो महत्त्वाकांक्षा विज्ञान है। अब हम दोनों पहलुओं पर अलग-अलग ढंग से विचार करेंगे।

''संतोषामृततृप्तानां यत्सुखं शांतचेतसाम्
न च तद् धनलुब्धानामितश्चेतश्च धावताम्।।''

संतोष रूपी अमृत से तृप्त और शांत-चित्त वाले मनुष्यों को जिस सुख शांति और आनंद का अनुभव होता है वह धन के लोभ में इधर-उधर भटकने वालों को नहीं होता है। सुख-शांति का मूल आधार संतोष है। संतोष वृत्ति न रखने से मनुष्य को जितना मिल जाय, उतना ही कम पड़ता है। असंतोष मानव में लोभ की तीव्र भावना पैदा करता है। हाँ, आवश्यकता जितना साधन तो अवश्य रखना पड़ता है, परन्तु उसकी सीमा अवश्य होनी चाहिये। इच्छाओं का तो कोई अंत ही नहीं है। द्रौपदी के चीर की तरह अंतहीन होती हैं। दुःशासन के हाथ थक गये, परन्तु द्रौपदी की साड़ी का अंत न हो पाया। आगम में कहा गया है-

''इच्छा हु आगाससमा अणंतिया''

इच्छा आकाश की तरह अनंत है। आकाश में असंख्य पक्षी उड़ते हैं, परन्तु उड़-उड़कर वापस आते हैं, कोई उसका अंत नहीं पा सका, इसी प्रकार मन रूपी पक्षी भी रोज इच्छाओं रूपी आकाश में उड़ा करते हैं, उड़ते-उड़ते उनके पंख थक जाते हैं, परंतु अंत कभी ढूंढ नहीं पाते हैं। इसलिये **''संतोषादनुत्तमः सुखलाभः''** के अनुसार सिर्फ संतोष धारण करने में ही उत्तम सुख की प्राप्ति है।

यह तो रही संतोष की बात, परन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि मनुष्य हाथ पर हाथ धर कर बैठ जाय। हर मनुष्य में यह महत्त्वाकांक्षा तो अवश्य होनी चाहिये कि वह ज़ीवन में किस प्रकार आगे बढ़े और इस अमूल्य मानव जीवन को सफल बनावे। महत्त्वाकांक्षा व्यक्ति को अपने लक्ष्य की ओर सतत

बढ़ने की प्रेरणा देती है। जिसमें कोई महत्त्वाकांक्षा नहीं होती है वह व्यक्ति प्रमादी, सुस्त और कायर होता है, जिन्दा लाश की तरह जीवन को घसीटता है पशुवत् जीवन जीता है। हम इतिहास के पृष्ठों को खोल कर देखें तो पता चलेगा कि संसार में जितने भी महापुरुष हुए हैं, सब महत्त्वाकांक्षी थे। जैसे- गांधीजी ने भारत को अहिंसा से आजादी दिलाने की मन में ठान ली तो आजादी लेकर ही रहे। भगवान बुद्ध और भगवान महावीर ने बोधित्व और केवलज्ञान पाने की ठान ली तो प्राप्त करके ही रहे।

जिस प्रकार संतोषी व्यक्ति के मन में सुख होता है उसी प्रकार महत्त्वाकांक्षी व्यक्ति के मन में भी आनंद का सागर हिलोरें लेता है। तेनसिंह जब पहली बार एवरेस्ट की चोटी पर पहुंचा तो उसकी खुशी का पार नहीं था।

राइट ब्रदर्स ने जब विमान का आविष्कार किया और जार्ज स्टीफेन्सन ने रेलगाड़ी का तथा ग्राहमबेल ने टेलीफोन का आविष्कार किया तो उन सबके पीछे उनकी अटूट आस्था और निरन्तर प्रयत्नशील महत्त्वाकांक्षा ने ही उन्हें अपने लक्ष्य तक पहुँचाया।

महत्त्वाकांक्षी व्यक्ति सोचता है कि आनन्द भौतिक वस्तुओं में नहीं है बल्कि अपने उद्देश्य की प्राप्ति में है। इच्छा और महत्त्वाकांक्षा में भी बहुत अंतर है। इच्छा वस्तुओं को पाने की ओर लालायित रहती है, जबकि महत्त्वाकांक्षा हमें कुछ बनने की ओर प्रेरित करती है।

एक अंग्रेज कवि ने कितना सुन्दर लिखा है-

"The less you have, the more you are"

संग्रह जितना कम, उतने तुम महान्।

कभी-कभी प्रश्न उठता है कि महत्त्वाकांक्षा भी कहाँ तक रखनी चाहिये। भीतर से उत्तर मिलता है कि जितनी हमारी योग्यता, सामर्थ्य और शक्ति हो वहीं तक छलांग लगानी चाहिये, उससे अधिक छलांग लगाई तो कभी-कभी गिरने का भी भय रहता है। जैसे चिड़िया अगर अपनी उड़ान चील की तरह भरने को जायेगी तो कहीं न कहीं टकरा कर चकनाचूर हो जायेगी। मनुष्य में दौड़ने की जितनी शारीरिक शक्ति है, उससे अधिक दौड़ लगायेगा तो अंत में बेहोश होकर गिर जायेगा। अलग-अलग व्यक्तियों में अलग-अलग तरह की क्षमता होती है, इसलिये अपनी क्षमता का ही सदुपयोग करना चाहिये। महत्त्वाकांक्षा हमें दुनियां की होड़ में आगे बढ़ाती है, प्रतियोगिता में भाग लेना सिखाती है कि हम भी सफल प्रतियोगी बनें। लेकिन अपने प्रतिद्वन्द्वी को नीचे गिराकर, उसका पतन करके हमें आगे नहीं बढ़ना है। उसको साथ लेकर,

उसका भला चाहते हुए और राग-द्वेष के विजेता बनकर तथा ईर्ष्या मात्सर्य को छोड़कर आगे बढ़ना चाहिये। दूसरों को सुख पहुंचाकर और सबके लिये कल्याण की कामना करते हुए तथा लोकहित की भावना भाते हुए अपने लक्ष्य की ओर बढ़ना चाहिए।

महत्त्वाकांक्षी व्यक्ति का लक्ष्य स्वहिताय और लोकहिताय दोनों तरफ होना चाहिये। स्वार्थी नीति नहीं होनी चाहिये। हे प्रभो, मेरा भी भला हो और सारे विश्व का भी भला हो, ऐसी भावना कूट-कूट कर भरनी चाहिये।

जैसे कोई बालक सोचे कि मुझे बड़ा होकर डॉक्टर बनना है तो उस दिशा में बढ़ते हुए यही सोचना है कि मैं अनेक रोगी व्यक्तियों की सेवा सुश्रूषा करूंगा, गरीबों की मुफ्त सेवा करूंगा, तो उसका डॉक्टर बनना जीवन में सार्थक हो जायेगा। कहने का अर्थ है कि महत्त्वाकांक्षी व्यक्ति का निष्काम सेवी होना अति आवश्यक है। जैसे जीवन में संतोषी होना आवश्यक है उसी प्रकार महत्त्वाकांक्षी को निष्काम सेवा करना आवश्यक है।

हमें संतोषी तो अवश्य बनना चाहिये, लेकिन निट्ठला संतोषी नहीं, प्रमादी और सुस्त संतोषी नहीं पुरुषार्थी तो अवश्य बनना चाहिये, लेकिन हमें लोभी नहीं असंयमी नहीं और दूसरों का धन हड़पने की भावना वाला नहीं होना चाहिये। अगर मेरे पास धन सम्पत्ति है तो मैं समाज में बाँट-बाँट कर खाऊँ। बिना कारण संग्रह न करूँ, जितनी आवश्यकता से मेरे जीवन का गुजारा हो सकता है, उतनी ही सामग्री पास में रखूँ, शेष समाज को अर्पण कर दूँ।

मुझे मानव जन्म मिला है तो इसे व्यर्थ न करूँ, सार्थक करूँ, सागर की लहरों की तरह नित्य आगे बढ़ता रहूँ, लेकिन सही दिशा में और संतोष धारण करते हुए महत्त्वाकांक्षी बने रहेंगे तो हमारा भी कल्याण होगा और दूसरों का भी कल्याण होगा।

-जी-१, पाम स्प्रिंग, कफ परेड़, मुम्बई-५

सोडियम

श्री दिलीप धींग

कटु और मर्मभेदी वचन
सोडियम के टुकड़े है
जो प्रेम शांति के
पवित्र नीर में भी
लगा देते हैं आग।

-बम्बोरा (राज.)

सत्य के शत्रु : भय और आस

पूर्व कर्नल दलपतसिंह बया 'श्रेयस'

सच बोलना मानव स्वभाव है, झूठ बोलना विभाव। एक अबोध बालक, जिस पर दुनिया का रंग नहीं चढ़ा हो, सदैव सच बोलता है। यहाँ तक कि वह यह भी कह देता है, "पापा कह रहे हैं कि वे घर पर नहीं हैं।" इससे अधिक निश्छलता क्या हो सकती है?

जैसे-जैसे बालक बड़ा होता है, दुनियां के रंग उस पर चढ़ने लगते हैं। वह सत्य-भाषण से होने वाली असुविधाओं का आकलन करने लगता है और उसके अल्पकालिक दुष्परिणामों से भयभीत होकर असत्य-भाषण की ओर प्रवृत्त होने लगता है। 'भय' सत्य का शत्रु है। अबोध निर्भय बालक सच बोलता है, समझदार भयभीत किशोर असत्य का सहारा लेता है।

सत्य का दूसरा शत्रु है 'आस'। जब व्यक्ति किसी से कुछ प्राप्त करने की आस या आशा रखता है, वह उसे येन-केन, प्रकारेण झूठी-सच्ची बातों से प्रसन्न करने की कोशिश करता है, उसकी खुशामद करने लगता है। ऐसे में उसके लिये सत्यासत्य का विवेक रखना कठिन ही नहीं, असंभव हो जाता है। गीता में कहा है कि लोभ से नष्ट चेतना वाले (सत्य को) देख कर भी नहीं देख पाते हैं (यद्यप्येते न पश्यन्ति लोभोपहतचेतसः। १/३८)। अतः 'आस' सत्य का शत्रु है।

हम दैनन्दिन कार्यकलापों में देखते हैं कि लोग अक्सर असत्य का सहारा लेकर तुरन्त लाभ प्राप्त करते हैं। असत्य के दूरगामी परिणामों की ओर दृष्टिपात करने की न तो उनमें क्षमता होती है, न मानस ही। अल्पकालिक लाभ ही जिनका लक्ष्य हो, उनसे और आशा भी क्या की जा सकती है? किन्तु यह तो शाश्वत सत्य है कि अन्ततोगत्वा तो सत्य ही विजयी होता है। हमारा राष्ट्रीय उद्घोष 'सत्यमेव जयते' भी इसी तथ्य को रेखांकित करता है। असत्य के दूरगामी दुष्परिणामों को दृष्टिगत करने से हम यह सहज ही देख सकते हैं कि वे दुष्परिणाम भी असत्यभाषी व्यक्ति के पद, गरिमा व महत्त्व के अनुसार ही उत्तरोत्तर अधिक घातक होते हैं। यदि एक बालक झूठ बोलकर एक गुलाबजामुन अधिक खा ले तो उसके परिणाम अधिकाधिक व्यक्तिगत या पारिवारिक होते हैं, किन्तु राजनेता, धर्मगुरु आदि महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों द्वारा बोले गए झूठ का परिणाम राष्ट्र व धर्म के लिये विनाशकारी होता है। कहा है-

'सचिव, वैद्य गुरु तीन जो प्रिय बोलहिं भय आस।
राज्य, धर्म, तनु तीन का होय बेगहिं विनाश।।"

अर्थात् यदि राज्य का मंत्री भय या आस के वशीभूत होकर राजा को सही सलाह न देकर उसको प्रिय लगने वाली बातें ही करता है तो वह राज्य शीघ्र ही नाश को प्राप्त होता है। किन्हीं कारणों से धर्मगुरु जो समाज की नैतिकता के संरक्षक माने जाते हैं, केवल मीठी बातों से श्रोताओं को प्रसन्न करने लगें तो वे धर्म को ही नष्ट करते हैं तथा यदि चिकित्सक मरीज की यथार्थ स्थिति को छुपाता है तथा उसे झूठे आश्वासन देता है तो वह उसके जीवन के साथ ही खिलवाड़ करता है। इसी तथ्य को स्पष्ट करता हुआ एक दृष्टान्त पठनीय, मननीय है-

एक राजा, जो मत्स्य-भक्षण का लोलुप था, प्रति एकादशी का व्रत रखता था और उसका पुरोहित उसे एकादशी की कथा सुनाता था। पुरोहित धर्मनिष्ठ था और वह राजा द्वारा बार-बार पूछने पर भी मछली खाने के पाप को इन स्पष्ट शब्दों में कहा करता था-

''तिल भर मच्छी खाय के, लाख गऊ दे दान।
काशी-करवत ले मरे, तो भी नरक निदान।।''

राजा मन मार कर मच्छी नहीं खाता। एक बार पुरोहित बीमार पड़ा और एकादशी की कथा बांचने के लिये पुरोहित पुत्र आया। राजा ने उसे भी पूछा कि क्या शास्त्रों में एकादशी को स्वल्प भी मछली खाने का विधान नहीं है? पुरोहित पुत्र ताड़ गया कि राजा मछली खाना चाहता है, किन्तु परलोक भय से नहीं खा पा रहा है। अच्छी दक्षिणा पाने की 'आस' में उसने झूठ-मूठ शास्त्रों के पन्ने पलटे और राजा से कह दिया, 'राजन्! मछली खाने में कोई दोष नहीं है।' राजा फिर भी शंकित था और उसने पूछा कि पुरोहित जी तो तिलभर मच्छी खाने पर लाख गऊ दान देकर व काशी-करवत लेकर मरने पर भी नरक गमन का पाप बतलाते हैं। चलते पुर्जे पुरोहित पुत्र ने तुरन्त पैंतरा बदला और कहा- ''राजन्! पिताजी सही कहते थे, दोष तिल भर मच्छी खाकर अतृप्त रहने में, लाख गऊ दान देकर संतृप्त होने में व काशी करवत लेकर कष्टकारी मृत्यु मरने में है, शास्त्र कहते हैं-**''मन भर मच्छी खाय के, एक गऊ दे दान।**
महलां सुतों जो मरे, सीधे सुरग निदान।।''

अतः आप निश्चिंत होकर यथेच्छ मत्स्य भोजन करें।

क्या कहना आवश्यक है कि अधिक दक्षिणा की 'आस' में पुरोहित पुत्र ने धर्म का नाश किया। मनस्वी पाठक विचार करें कि अल्पकालिक लाभ की आस में व अल्पकालिक हानि के 'भय' से सत्य को तिलांजलि देकर तथा असत्य का आलंबन लेकर वे भी कहीं अपने जीवन का नाश तो नहीं कर रहे हैं?

-ई, २६, भूपालपुरा, उदयपुर-313001 (राज.)

(क्रमशः 4)

दशवैकालिक सूत्र : षष्ठ अध्ययन

डॉ. अमृतलाल गांधी

दशवैकालिक सूत्र के षष्ठ अध्ययन का नाम 'महाचार कथा' है। तृतीय अध्ययन की अपेक्षा इसमें आचार स्थान का विस्तार से वर्णन होने के कारण इसे 'महाचार कथा' नाम दिया गया है। तृतीय अध्ययन में निषेध पक्ष से अनाचारों का विवेचन किया गया था, परन्तु इस अध्ययन में आचार के १८ स्थानों का सहेतुक वर्णन है जिसका पालन छोटे-बड़े सभी साधुओं के लिये आवश्यक बतलाया है। श्रमण जीवन की चर्या में इन १८ स्थानों में साधु के आचार का सम्पूर्ण प्रतिपादन होता है। इस अध्ययन की ६८ गाथाओं में साध्वाचार की संक्षिप्त झांकी प्रस्तुत करते हुए १८ स्थान इस प्रकार बतलाये हैं- १. अहिंसा २. सत्य ३. अदत्तादान विरमण ४. ब्रह्मचर्य ५. अपरिग्रह ६. रात्रि भोजन विरमण ७. षट्काय रक्षण में पृथ्वीकाय रक्षण ८. अप्काय रक्षण ९. तेऊकाय रक्षण १०. वायुकाय रक्षण ११. वनस्पतिकाय रक्षण १२. त्रसकाय रक्षण, जिसमें अकल्पपिंड शय्या, वस्त्र-पात्र सदोष नहीं लेना १३. गृहिभाजन-थाल कटोरे आदि नहीं लेना १४. पलंग नहीं लेना १५. निषद्या, गादी, कुर्सी आदि नहीं लेना १६. स्नान नहीं करना १७. तेल का सेवन नहीं करना १८. पाउडर नहीं लगाना। इस अध्ययन में पंच महाव्रत से लेकर विभूषावर्जन तक के मूलोत्तर गुण रूप संपूर्ण साध्वाचार का वर्णन होने से ही इसका नामकरण महाचार कथा है। इसकी चौथी गाथा में साधु को धर्मार्थकामी बतलाते हुए कहा है कि उसका सम्पूर्ण आचार कठोर एवं साधारण जनों के लिये अत्यंत कठिन है।

अध्ययन की ग्यारहवीं गाथा का प्रथम पद है "सव्वे जीवा वि इच्छंति, जीविउं न मरिज्जिउं" अर्थात् संसार के सभी जीव जीना चाहते हैं, मरना कोई नहीं चाहता। अतः प्राणिवध को भयंकर जानकर निर्ग्रन्थ साधु इसका सर्वदा वर्जन करते हैं। आगे कहा है कि निर्ग्रन्थ साधु अपने प्रयोजन से या किसी दूसरे के लिये, क्रोध से अथवा भय एवं लोभादि कारण से पर पीड़ाकारी मृषावचन स्वयं बोले नहीं एवं दूसरों से भी बुलावे नहीं। साधु के तीसरे अदत्त व्रत के लिये कहा है कि साधु दंत-शोधन हेतु तृण मात्र भी स्वामी की आज्ञा बिना नहीं ले। गाथा २३ के अनुसार साधुओं के लिये तीर्थंकरों ने ऐसा नित्य तपःकर्म कहा है कि जिससे संयम की अनुकूलवृत्ति हो और एक बार आहार ग्रहण हो।

साधु के लिये तीन प्रकार के पात्र ग्रहण योग्य बतलाये हैं- तुम्ब पात्र, काष्ठ पात्र और मिट्टी के पात्र। साधु, कांच या चीनी के पात्र में अशनपानादि नहीं करे। कभी चिकित्सालय में इनका उपयोग लेना पड़े तो अपवाद समझे। अंतिम गाथा में कहा है कि १८ आचार धर्मों की निर्दोष आराधना करने वाले मुनि सदा उपशांत, ममत्व रहित और अपरिग्रही होते हैं। वे आत्म-विद्या के ज्ञान पर चलने वाले षट्काय के रक्षक यशस्वी पुरुष, कर्म मल को दूर कर शरद्काल की प्रसन्नऋतु में निर्मल चन्द्र के समान सिद्धि-मुक्ति पद को या वैमानिक देव के भव को प्राप्त करते हैं।

-७३८, नेहरू पार्क रोड़, सरदारपुरा, जोधपुर (राज.)

दौड़

अशोक बोहरा

मनुष्य लौकिक सम्पूर्णता पाने के लिये
और मुकम्मल होने के लिये
जीवन भर दौड़ लगाता है
सारे भ्रम पालता, भटकता है
रिश्ते जोड़ता है, ओढ़ता है, तोड़ता है
असीस से निस्सीम तक छोड़ता पकड़ता है
अन्त में समझ में आता है
दौड़ सिर्फ दौड़ होती है
खाक छानने के लिये
मान पाने के लिये
मुकम्मल तो वह न कल था
और न ही आज
एक और दौड़ फिर
जारी होती है
वह दुनियावी मुकम्मलता के लिये नहीं
वरन् अपने आपको
चिह्नने और जानने के लिये
दौड़ फिर भी जारी है
यह दौड़ निश्चय ही रंग लायेगी
मन और आत्मा पर छायेगी
दौड़ व भटकन शुभ ओर ले जायेगी
मन का प्रकाश
आत्मा का विश्वास
सहज पा जायेगी

—10, प्रताप नगर, दादाबाड़ी, कोटा

विचारों का प्रभाव

श्री प्रकाशचन्द लोढ़ा

मनुष्य एक विचारशील प्राणी है। वह अपने विचारों के द्वारा ही अपनी क्रिया को मूर्त रूप प्रदान करता है, अतः स्पष्ट है कि आचार शुद्धि के पहले विचारशुद्धि की आवश्यकता है। कार्य की पवित्रता विचारों की पवित्रता पर आधारित है।

जिस क्रिया के साथ पवित्र भावना का संबंध जुड़ जाता है वह क्रिया भी पवित्र हो जाती है। मन के पवित्र संकल्प आसपास के वातावरण को पवित्र बनाते हैं। तालाब में एक कंकर फेंका जाये तो उसमें लहरें उठती हैं और एक के बाद एक प्रवृत्त लहरें तट तक पहुंचती हैं। इसी प्रकार हमारे मन के परमाणु भी समाज में लहरें बन कर आगे बढ़ते हैं। यही कारण है कि तीर्थंकर देव के समवसरण में सिंह और बकरी साथ-साथ बैठते थे। बकरी के मन में भय नहीं होता था कि सिंह मुझे खा जायेगा और सिंह के हृदय में यह क्रूर भाव नहीं उठते थे कि मैं बकरी को खा जाऊँ। बकरी के मन में भय नहीं है तो सिंह भी अपनी क्रूरता भूल चुका है। यह एक पवित्र व्यक्ति के पवित्र विचारों का प्रभाव है।

तीर्थंकर देव का समवसरण तो अपने लिये बहुत दूर की वस्तु है। किन्तु यह तो अपने अनुभव की वस्तु है कि जब कभी हम छोटे बच्चे को प्यार से चपत लगा देते हैं तो चपत खाकर भी वह हँसता रहता है। परन्तु जब कभी क्रोध में उसके कान को छू भी लिया जाय तो वह जोरों से रो उठेगा। क्योंकि पहले हमारे दिल में प्रेम था, अबकी बार उसका स्थान क्रोध ने ले लिया है। विचारों के परिवर्तन ने कितना बड़ा परिवर्तन ला दिया है।

यह विचारों का उतार-चढ़ाव ही तो था कि प्रसन्नचन्द्र राजर्षि सातवीं नरक के द्वार पर पहुंच रहे थे कि कुछ ही मिनटों के बाद वे स्वर्ग को भी लांघ कर मोक्ष तक जा पहुंचे। विचारों ने मोड़ खाया तो कितने ऊपर उठ गये।

मनुष्य के विचार ऊँचे हैं तो वह ऊपर उठता है। जिसके विचारों का पतन होता है उस व्यक्ति का पतन होते देर नहीं लगती।

भरत चक्रवर्ती ने कांच के भवन में केवल ज्ञान पाया था। हम भी प्रतिदिन कांच के सामने जाते हैं। शरीर की सजावट में कितना समय बीत जाता है, आधा घण्टा तो बालों को सजाने में लग जाता है, फिर केवलज्ञान कितनों को प्राप्त हुआ है? पर हाँ, भरत चक्रवर्ती ने कांच के भवन में केवलज्ञान पाया था और माता मरुदेवी ने हाथी पर बैठे-बैठे केवलज्ञान पाया था। किन्तु जब तक

विचार शुद्ध नहीं होगा, मनुष्य कुछ भी कर ले कितनी ही तपस्याएँ, आराधना या कितने ही धर्म-कर्म करले, बिना विचार-शुद्धि के कुछ होने जाने वाला नहीं है।

दान, शील और तप की साधना श्रेष्ठ मानी जाती है, किन्तु क्या कभी ऐसा भी हुआ कि दान देकर भी कोई नरक में गया हो? आगम के पन्ने उलटने पर यह ज्ञात होता है कि दान देने वाले भी नरक में गये हैं तो तपस्वी साधक की गाड़ी भी उलट गई। अर्थात् मानव अपनी क्रिया कितनी ही सुन्दर कर रहा है, पर उस क्रिया के पीछे उसके विचार सही नहीं हैं तो वह सुन्दर क्रिया भी उसे नरक के द्वार तक ले जा सकती है।

बहुत से कुत्ते मोटरों में घूमते हैं। उन्हें दूध भी मिलता है और डबलरोटी भी, जो कि बहुत से मनुष्य बालकों के भाग्य में नहीं होती हैं, फिर भी देह उन्हें वक्र मिली है, इसका हेतु है, पूर्व जीवन में संभवतः उन्होंने गरीबों की सेवा की होगी, अनाथों के आंसू पोछे होंगे, पर सेवा करते समय विचारों में वक्रता रह गयी होगी। परिणामतः सेवा का प्रतिफल उन्हें मीठे रूप में मिला, पर विचारों की वक्रता ने देह की सरलता छीन ली। कोयल को कंठ की मधुरता मिली है, उसका स्वर मन को मोह लेता है, किन्तु स्वर की मिठास में भावों की वक्रता रही होगी। इसीलिये उसे काली कलुटी देह मिली है।

दूषित विचार जहर के कीटाणु लेकर आता है। वह जिस हृदय में पहुंचता है, उसे ही विषाक्त बनाता है। मिट्टी के तेल की एक बून्द को इत्र की सीसी में छोड़ देने से खुशबू बदबू में बदल जायेगी।

विचार पवित्र हैं तो आचरण भी पवित्र होगा। क्योंकि आचरण क्या है? विचारों की छाया मात्र ही तो आचरण है। इसलिए पूर्व में यह कहा गया कि आचारशुद्धि के लिये पहले विचार शुद्धि होना आवश्यक है।

अतः सारांश रूप में मैं यही कहना चाहूँगा कि हर प्राणी को प्राणिमात्र के प्रति सही विचार रखना चाहिये, क्योंकि मन के भावों अर्थात् विचारों से भी कर्मों की निर्जरा निश्चित होती है। अच्छे विचारों से पाप कर्म नष्ट होकर पुण्य कर्मों का उदय होता है।

-सुबोध शिक्षा समिति, केन्द्रीय कार्यालय
रामबाग सर्किल, जयपुर

वह फूल नहीं वह कटंक है, जिसमें सौरभ का सार नहीं।
मत कहो उसे हरगिज वीणा, जिसमें बजती झंकार नहीं।
वह जीवित भी है मरा हुआ, जो करता पर उपकार नहीं।
वह हृदय नहीं वह पत्थर है, जिसको जीवों से प्यार नहीं॥

सत्य की ही जीत सदा

श्री लालचन्द जैन

'सत्य वचन में ही धर्म रहा हुआ है। सत्य ही उत्तमोत्तम पवित्रता है। सत्य वचन के प्रभाव से भयंकर सांप भी भाग जाता है। सत्य से देव भी वश में होते हैं। सत्यवादी के सभी मित्र बन जाते हैं। सत्य में सभी गुण समाहित हैं, अतः सत्य वचन ही उत्तम है। सत्य से ही सागर को लक्ष्मी और कीर्ति प्राप्त हुई, जबकि असत्य के कारण उसके भाई को बहुत दुःख भोगने पड़े।

भारत का तिलक स्वरूप कंचनपुर नगर था, जिसकी देवता भी प्रशंसा करते थे। नगर के बाहर उद्यान, आरामगृह आदि अति मनोहर थे। इस नगर का राजा समरसिंह था, जिसने अनेक युद्धों में विजय प्राप्त की थी। यह नगर उत्तम अंतःपुर, युवराज, मंत्री, सेठ, साहुकार आदि से समृद्ध था। इसी नगर में ब्राह्मण कुल में उत्पन्न, शास्त्रों के ज्ञाता दो अध्यापक रहते थे। एक का नाम सागर और दूसरे का नाम अग्निसिंह था। ये दोनों सगे भाई अलग अलग गुरुकुल चलाकर वेदविद्या का अध्ययन कराते थे। ये दोनों क्षीरकदंब आचार्य के पास पढ़े हुए थे।

आचार्य क्षीरकदंब की मृत्यु के बाद उनका शिष्य वसु उज्जैन नगर का राजा हुआ। उनका एक शिष्य नारद गुरुकुल खोलकर अपने शिष्यों को वेदों की शिक्षा देता था। दूसरा शिष्य पर्वत किसी अन्य नगर में अपने शिष्यों को वेदों की शिक्षा देता था। पर्वत ने 'अजेहिं जण्णव्वं' वेद वाक्य की व्याख्या करते हुए अपने शिष्यों को बताया कि'अज'अर्थात् बकरे की आहुति देकर यज्ञ करना चाहिए। इसी समय उससे मिलने आये हुए उसके मित्र सहपाठी नारद ने कहा कि "हमारे आचार्य ने बताया था कि 'अज' का अर्थ फिर से नहीं उगने वाला तीन साल पुराना धान (चावल) होता है, उसी से यज्ञ में आहुति देनी चाहिए। क्या आपको यह बात याद नहीं है?"

अपने अभिमान के कारण पर्वत ने नारद की बात नहीं मानी और वाद-विवाद पर उतारू हो गया। शर्त यह रखी गई कि जो हारेगा उसकी जीभ काट ली जायेगी। वसु राजा को न्यायाधीश बनाया गया कि वह जो निर्णय देगा वह दोनों को मान्य होगा। निश्चित समय पर वसु की राज्यसभा में दोनों का विवाद हुआ। यद्यपि वसुराजा नारद और पर्वत का सहपाठी था और आचार्य ने 'अज' शब्द का अर्थ बताया था, यह उसे मालूम था, किन्तु पर्वत की माता जो उपाध्याय की पत्नी भी थी, ने पहले से ही वसु को कह दिया था कि उसे उसके

पुत्र का ही पक्ष लेना चाहिये। अतः राजा ने भी यही निर्णय दिया कि 'अज' का अर्थ बकरा ही उपयुक्त है। वसु राजा के इस झूठ से उसकी कुलदेवी रुष्ट हो गई, उसने प्रकट होकर राजा को जोर की लात मारी, जिससे राजा अधर में झूलते हुए सिंहासन सहित जमीन में धंसकर मर गया और पर्वत की भी जीभ कट गई।

यह सब सुन कर पापभीरु सागर ने कहा- "पर्वत की व्याख्या झूठी है। राजा वसु ने भी उसका पक्ष लिया, यह उससे भी बड़ा झूठ है। महान् व्यक्ति भी किस प्रकार झूठे पक्षपात में फँस जाता है?"

निर्बल बुद्धि वाले और धर्म में अभिरुचि वाले सागर ने लोगों से सुना कि यहाँ आचार्य सम्राट आनन्दऋषि जी पधारे हुए थे, अतः वह उनके पास गया और बोला- "हे भगवन्! पहले आप जब नासिक नगर में पधारे थे, तब मैंने आपसे प्रथम अणुव्रत का नियम लिया था, अब मैं आपके पास झूठ नहीं बोलने के दूसरे अणुव्रत की प्रतिज्ञा लेना चाहता हूँ, कृपया मुझे इसका स्वरूप समझावें।"

"हे भद्र! सुनो, स्थूल मृषावाद का त्याग दूसरा अणुव्रत है। इस व्रत को लेने वाला कन्या, गाय, जमीन, जायदाद आदि के संबंध में झूठ नहीं बोलता। किसी की धरोहर को झूठ बोलकर हड़पता नहीं और झूठी साक्षी नहीं देता। जिनके बारे में प्रायः झूठ बोला जाता है, वे पदार्थ दो प्रकार के होते हैं- एक तो दो या चार पाँव वाले दूसरे बिना पाँव वाले। कन्या या दास- दासी दो पाँव वाले होते हैं, जबकि गाय, भैंस, घोड़ा आदि पशु चार पैर वाले। जमीन जायदाद और धन दौलत बिना पाँव के पदार्थ हैं। इस व्रत को स्वीकार करने वाले को भी पाँच अतिचारों से बचना चाहिए।

एकदम बिना विचारे सहसा किसी पर झूठा दोषारोपण करना सहसाभ्याख्यान कहलाता है। गुप्त मंत्रणा करने वालों पर दोषारोपण करना रहस्याभ्याख्यान है। अपनी स्त्री के साथ एकांत में हुई गुप्त बातों को प्रकट करना स्वदारमंत्रभेद कहलाता है। झूठे उपदेश देना मृषाउपदेश कहलाता है और झूठे दस्तावेज या दो नंबर की बहियाँ लिखना कूडलेहकरण अतिचार है। मोक्षगामी मनुष्य तो अपने व्रतों में अतिचार लगाता ही नहीं, किन्तु असावधानी से व्रत पालन करने वालों को उपर्युक्त अतिचार लग सकते हैं।"

सागर- "हे भगवन्! मुझे स्थूलमृषावाद के त्याग की प्रतिज्ञा करवा दीजिये, मैं जीवन पर्यन्त मन, वचन, काया से झूठ नहीं बोलूँगा और न ही किसी से झूठ बुलवाऊँगा।"

आचार्यप्रवर ने सागर को दूसरे अणुव्रत की प्रतिज्ञा करवा दी।

इस समय सागर का भाई अग्निसिंह भी सभा में आया हुआ था। उसने कहा- "हे भगवन्! इस प्रकार व्रत लेने से क्या लाभ? त्याग का भाव न हो, मन भी न हो, पूर्व कर्म का क्षय न हुआ हो तो प्रतिज्ञा लेने पर भी पूर्व कर्म के उदय के कारण झूठ बोला जाय तो प्रतिज्ञा भंग हो जायेगी।"

आचार्य-"भाई! व्रत का निषेध नहीं करना चाहिये। कर्मों का क्षय अपने आप ही नहीं हो जायेगा। जैसे औषधि लेने से रोग धीरे-धीरे जाता है, वैसे ही व्रत या त्याग करने से अशुभ कर्म भी नष्ट होते हैं। कर्म का नाश होने के बाद व्रत लेने की तुम्हारी बात तो रोग के नष्ट होने के बाद औषधि लेने जैसी है, जो व्यर्थ है। कर्मों का क्षय होने के बाद तो त्याग की आवश्यकता ही क्या है?"

आचार्यप्रवर द्वारा इस प्रकार निरुत्तर कर देने पर अग्निसिंह घबरा गया और अपने घर लौट गया। सागर पर आचार्य के उपदेश का असर अच्छा हुआ। अतः भक्तिभाव पूर्वक व्रत ग्रहण कर गुरुदेव का अभिनंदन करते हुए वह भी अपने घर लौट गया।

घर लौटने पर सागर की पत्नी ने उससे पूछा कि "वह इतनी देर तक कहां गया था?" सागर ने आचार्यप्रवर के पास जाने और व्रत ग्रहण करने की सब बात बता दी। इस पर पत्नी ने कहा कि उसे भी व्रत ग्रहण करना है। तब सागर पत्नी को लेकर वापस गुरुजी के पास आया और उसे भी व्रत ग्रहण करवाया।

यह सुनकर अग्निसिंह को बहुत द्वेष हुआ और वह लोगों से कहने लगा कि सागर और उसकी पत्नी ब्राह्मण कुल की मर्यादा के विरुद्ध प्रवृत्ति कर रहे हैं, वे शूद्रों के पांवों में पड़ते हैं, वेदों में लिखी बात को नहीं मानते।

एक बार कंचनपुर के राजा ने यज्ञ करने की सोची, उसने अग्निसिंह को यज्ञ का अधिकारी बनाया। सागर की इच्छा न होने पर भी उसने उससे यज्ञ में शरीक होने का आग्रह किया। वहां बकरों को यज्ञ में बलि देने के लिये लाया हुआ देखकर उसे दया आ गई और उसने नारद और पर्वत के वाद- विवाद का हवाला देकर कहा कि 'अज' का अर्थ तीन साल पुराना धान होता है बकरा नहीं। वसु राजा ने पर्वत का पक्ष लेकर 'अज' का अर्थ बकरा किया, जिससे वसु और पर्वत की मृत्यु हो गई और उसके पीछे अन्य आठ राजाओं की भी मृत्यु हो गई। आप वेद के जानकार अन्य पंडितों से पूछकर ही निर्णय करें। धर्म की सुनिश्चिंत विधि का सही ढंग से पालन करने पर ही वे वांछित फल देती हैं।

सागर का उपर्युक्त कथन सुनकर राजा ने कहा कि "मैंने भी पहले यह सुना था कि वसु राजा की कुलदेवी ने झूठ बोलने के कारण उसे सिंहासन सहित जमीन में दबा दिया था, अन्य आठ राजाओं की भी झूठ बोलने के कारण मृत्यु हुई थी।"

राजा ने तुरन्त अग्निसिंह और अन्य पंडितों को बुलाकर पूछा कि "यज्ञ में बकरों की बलि देनी चाहिए या तीन वर्ष पुराने चावल की?"

पंडितों ने कहा, "हमने परंपरा से सुना है कि पर्वत और नारद के बीच इस विषय में वाद-विवाद हुआ था, उसमें झूठ का पक्ष लेने से वसु राजा की मृत्यु हुई, अतः यज्ञ में पुराने चावल की ही आहुति देनी चाहिये।"

राजा ने सागर के सामने देखा तब सागर ने कहा कि "महाराज! पंडित ठीक ही कह रहे हैं।"

यह सुनकर अग्निसिंह क्रोधित हो गया। वह बोला, "हे राजन्! यहां कोई जानकार है ही नहीं, आप मेरे वचन में शंका क्यों कर रहे हैं? मेरा भाई सागर तो मूर्ख है, उसने वेद धर्म को छोड़कर श्वेताम्बर जैन धर्म स्वीकार कर लिया है, वह तो मात्र दिखावे का ब्राह्मण रह गया है। ये पंडित भी पितृश्राद्ध आदि मानने वाले नहीं हैं अतः वे यज्ञ के विषय में कुछ भी नहीं जानते। हे राजन्! यदि 'अज' का अर्थ बकरा न हो तो मैं दिव्य प्रयोग से उसे सिद्ध कर सकता हूँ।"

राजा ने अग्निसिंह को दिव्य प्रयोग करने की स्वीकृति दे दी।

फिर लोहे की मोटी छड़ को अग्नि में तपा कर लाल कर दिया गया। अग्निसिंह ने सभा में आकर कहा, "हे अग्निदेव! यदि मैं झूठ बोल रहा हूँ तो मुझे जला दे।" छड़ को पकड़ते ही अग्निसिंह के हाथ जल गये, तब लोगों ने कहा कि यह अग्निसिंह शूद्र है। राजा ने भी नगर में ढिंढोरा पिटवा दिया कि अग्निसिंह पापी है, असत्यवादी है। अग्निसिंह को राजा ने नगर से बाहर निकाल दिया और सागर का सम्मान किया। सागर सद्गति में गया और अग्निसिंह झूठ के कारण दुर्गति में गया।

इसी प्रकार इसी जन्म में असत्य के कड़वे फल और सत्य के मीठे फल देखकर भी मूर्ख लोग अपने हित को नहीं चाहते और झूठ बोलते हैं, यह कितने आश्चर्य की बात है। यदि सत्य बोलने से किसी जीव की हिंसा होती है तो उसे असत्य ही समझना चाहिए। इसी प्रकार असत्य बोल कर यदि किसी जीव की रक्षा होती हो तो वह असत्य सत्य ही है। अपनी बुद्धि से विचार कर बोलना चाहिए ताकि उससे किसी को अंश मात्र भी संताप न हो। असत्यवाद

को इस भव में और परभव में दुःख प्राप्त होता है, अतः सुख चाहने वालों को सत्य ही बोलना चाहिए।

महापुरुषों ने कहा कि झूठ बोलने से जीभ गल जाती है, जिससे तुतलाहट आती है। वह अच्छा वक्ता नहीं बन सकता। झूठ बोलने वाले के मुंह से दुर्गंध आती है।

जैसे वेश्याएँ निर्धन पुरुष का त्याग कर देती हैं उसी प्रकार सिद्धियाँ झूठे पुरुष का त्याग कर देती हैं। झूठ बोलने वाले को आकाशगामिनी सिद्धि, दूरदृष्टि, इच्छानुसार विचरण की शक्ति, अंजनविधि, संवाद आदि एवं औषधियों की सिद्धि प्राप्त नहीं होती।

झूठ बोलने वाले को नरक गति प्राप्त होती है। कमलों को मुर्झाने वाले हिमपात के समान झूठ सब उत्तम कार्यों को नष्ट करने वाला है, विश्वास के पर्वत को तोड़ने के लिये वज्र के समान है,सुख रूपी धान्य को जलाने वाले पवन के समान है। झूठ बोलने की प्रवृत्ति कल्याणकारी कैसे हो सकती है?

झूठ बोलने की प्रथा असंख्य दोषों वाली है। झूठ बोलने से सद्गुणी लोग दूर ही रहते हैं, फिर भी सद्बुद्धि के लिये रोग के समान झूठ बोलने की प्रथा मूर्ख लोगों के मन का हरण क्यों कर लेती है, बड़े आश्चर्य की बात है।

-१०/५९५, चौपासनी हाउसिंग बोर्ड, जोधपुर(राज.)

आचार्यदेव हस्ती के अनमोल वचन

सौ.कमला सिंघवी

- शास्त्र ही मनुष्य का वास्तविक नयन है।
- स्वाध्याय चित्त की स्थिरता व पवित्रता के लिए सर्वोत्तम उपाय है।
- अज्ञान के नष्ट होने पर भीतर में आत्मबल का तेज जगमगाने लगता है।
- जिससे जड़-चेतन का ज्ञान हो, आत्मा-परमात्मा का ज्ञान हो, बन्ध-मोक्ष का ज्ञान हो, उसे सम्यग्ज्ञान कहते हैं।
- अन्तर में शक्ति विद्यमान रहते हुए भी उसे जगाया नहीं गया तो विकास नहीं होगा।
- कार्य सिद्धि के लिए काल, स्वभाव, कर्म, नियति और पुरुषार्थ ये पाँच साधन माने गये हैं।
- ज्ञान का बल होने पर मनुष्य दुःख के क्षणों में धीरज रख सकता है। ऐसे ज्ञान की प्राप्ति सत्संग व स्वाध्याय से होती है।

-अध्यापिका, स्वाध्यायी ज्ञान मंदिर जैन पाठशाला, भड़गांव

साहित्य-समीक्षा

डॉ. धर्मचन्द जैन

***कर्मयोगी भावड़शाह**—आचार्य विजयनित्यानन्दसूरि **प्रकाशक**— अनेकान्त फाउण्डेशन, द्वारा—आत्मवल्लभ एण्टरप्राइजेज, 236/4, इण्डस्ट्रियल एस्टेट, गुप्ता रोड़, लुधियाना—7 **अन्य प्राप्ति स्थान**— महावीर बाल विद्यालय, रानी स्टेशन, जिला—पाली (राज.) **पृष्ठ** 160, **मूल्य** 25 रुपये, नवम्बर 2001*

समृद्धि के उत्थान-पतन में भी समभाव के साथ कर्मनिष्ठ रहने का अप्रतिम उदाहरण है कर्मयोगी भावड़शाह का जीवन। समृद्धिशाली भावड़शाह एक दिन फेरी लगाकर कमाने की स्थिति में आ जाते हैं, तब भी उन्होंने नैतिक मूल्यों की रक्षा करते हुए अपनी दान की प्रवृत्ति को जारी रखा। उपन्यास शैली में लिखित यह कथानक आज भी लाखों लोगों के लिए जीवन का प्रेरक सम्बल बन सकता है। भावड़शाह का जो समय रचनाकार ने बताया है, वह विद्वानों के लिए विचारणीय अवश्य है, किन्तु कथानक प्रेरक है।

***दानवीर जगडूशाह**—आचार्य विजयनित्यानन्दसूरि, **प्रकाशक** एवं अन्य प्राप्ति स्थान के लिए द्रष्टव्य कर्मयोगी भावड़शाह का विवरण, **पृष्ठ** 124, **मूल्य**—25 रुपये, अगस्त 2001*

जगडूशाह का नाम गुजरात के दानवीरों में प्रसिद्ध है। आपने तीन वर्ष के भयंकर दुष्काल के समय अपने अन्न-भण्डार खोलकर लाखों मनुष्यों तथा लाखों मूक पशुओं के प्राणों की रक्षा की। बारहवीं-तेरहवीं शती के दानवीर जगडूशाह ने अपनी लक्ष्मी का सहज करुणाभाव से सदुपयोग किया तथा सर्वधर्म सद्भाव, परधर्म तितिक्षा और स्वधर्म-उत्कर्ष का अनूठा उदाहरण प्रस्तुत किया। जगडूशाह का यह जीवन चरित्र अनुकम्पा, करुणा एवं दान की प्रवृत्ति को प्रोत्साहित करता है।

***धर्मवीर वस्तुपाल तेजपाल**—आचार्य विजयनित्यानन्दसूरि, **प्रकाशक** एवं प्राप्ति स्थान (उपर्युक्तानुसार), **पृष्ठ** 132, **मूल्य**—25 रुपये, जनवरी 2001*

गुजरात के गौरवशाली इतिहास में महामन्त्री वस्तुपाल-तेजपाल का नाम प्रख्यात है। वे अद्भुत वीर, साहसी, धर्मनिष्ठ और उदारता के धनी थे। वस्तुपाल एवं तेजपाल दोनों भ्राताओं ने मन्दिर-निर्माण, जीर्णोद्धार एवं लोककल्याण के अनेक कार्य किए। उन्हें अनुपमा देवी का भी अपने कार्यों में मार्गदर्शन प्राप्त था। विक्रम की तेरहवीं शताब्दी के इन तेजस्वी पुरुषों के जीवन-चरित्र को हिन्दी में प्रस्तुत कर आचार्य श्री नित्यानन्दजी ने हिन्दी पाठकों को जैन संस्कृति एवं इतिहास का बोध कराया है।

***पुण्य पुरुष पेथड़शाह**—आचार्य विजयनित्यानन्दसूरि, **प्रकाशक** एवं अन्य प्राप्ति स्थान (उपर्युक्तानुसार), **पृष्ठ** 150, **मूल्य**—25 रुपये, नवम्बर 2000*

स्वर्णदानी देदाशाह के पुत्र पेथड़शाह का नाम नवीन जिन मन्दिरों के निर्माण, ज्ञान-भण्डारों की स्थापना, स्वधर्मी-सेवा आदि प्रवृत्तियों से तो प्रसिद्ध है ही, किन्तु

उन्होंने अपार वैभव, राज-सम्मान, रूपवती पत्नी एवं शरीर सौन्दर्य के रहते हुए भी ३२ वर्ष की युवावय में शीलव्रत अंगीकार कर लिया था। यह उनके जीवन की अद्भुत विशेषता थी। पेथड़शाह के पुत्र झांझणशाह भी धर्मप्रभावक हुए।

विद्युत.: सजीव या निर्जीव–*मुनि यशोविजय,* ***प्रकाशक***–*दिव्यदर्शन ट्रस्ट, 39 कलिकुंड सोसायटी, मफलीपुर चार रास्ता, धोलका, जिला–अहमदाबाद–387810,* ***पृष्ठ*** *12+146,* ***मूल्य***–*10 रुपये, विक्रम संवत् 2058*

जैन परम्परा में विगत शताब्दी से यह प्रश्न अनेक बार उठता रहा है कि विद्युत सजीव है या निर्जीव। आचार्य महाप्रज्ञ ने विद्युत को निर्जीव अंगीकार किया है, जबकि श्वेताम्बर जैनों की अन्य परम्पराएँ विद्युत् को सजीव स्वीकार करती हैं। मुनि यशोविजयजी ने प्रस्तुत पुस्तक में आगम वाङ्मय के आधार पर विद्युत को सजीव सिद्ध किया है तथा वैज्ञानिक विसंगतियों का निराकरण करने का भी सफल प्रयत्न किया है। पुस्तक तर्कसंगत एवं ग्राह्य है। इसमें आचार्य महाप्रज्ञ जी के मन्तव्य का दृढ़तापूर्वक प्रमाणपुरस्सर खण्डन किया गया है। प्राचीन परम्परा के रक्षण एवं सुविधावाद पर अंकुश के लिए पुस्तक की उपयोगिता असंदिग्ध है।

सूचना

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, बापू बाजार, जयपुर द्वारा प्रकाशित नया साहित्य निम्नानुसार है–

1. गजेन्द्र व्याख्यानमाला, भाग 5	15 रुपये
2. गजेन्द्र व्याख्यानमाला, भाग 6	15 रुपये
3. गजेन्द्र व्याख्यानमाला, भाग 7	15 रुपये
4. उत्तराध्ययन सूत्र भाग–3	50 रुपये
5. हीरा प्रवचन–पीयूष, भाग 1	15 रुपये
6. शास्त्र स्वाध्याय माला(अनेक आगमों का मूलपाठ)	15 रुपये
7. सूखविपाक सूत्र (हिन्दी अनुवाद एवं विवेचन)	10 रुपये
8. ज्ञातासूत्र की कथाएँ	5 रुपये
9. कषाय–विजय	2 रुपये
10. स्वाध्याय गीतिका	15 रुपये
11.नमो गणि–गजेन्द्राय	20 रुपये
12.जैनागम के स्तोक रत्न	10 रुपये
13.चौदह नियम	4 रुपये
14.अहिंसा निउणा दिट्ठा	40रुपये
16.आहार संयम और रात्रि–भोजन–त्याग	4 रुपये

पुस्तकों का मूल्य अल्प है। डाक व्यय भेजकर पुस्तकें उपर्युक्त पते से मंगवायी जा सकती हैं। *–प्रकाशचन्द डागा, मंत्री,*

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, बापू बाजार, जयपुर

समाचार-संकलन

आचार्यप्रवर का गुजरात की धरा पर पदार्पण

● परम श्रद्धेय आचार्यप्रवर पूज्य श्री १००८ श्री हीराचन्द्र जी म.सा., महान् अध्यवसायी श्री महेन्द्रमुनि जी म.सा. आदि ठाणा ८ ने महाराष्ट्र क्षेत्र के ठाणे जिलान्तर्गत विभिन्न ग्राम-नगरों में धर्मोद्योत-धर्मप्रभावना करते हुए १ जनवरी को गुजरात सीमा के अन्तर्गत उमरगांव में मंगलप्रवेश किया। जलगांव, चेन्नई, वापी, सवाईमाधोपुर, मुम्बई, डहाणू आदि अनेक ग्राम-नगरों के श्रद्धालुओं ने नव वर्ष के शुभारंभ पर दर्शन-वन्दन कर सर्वप्रथम मांगलिक श्रवण की। उमरगांव के श्रद्धालु डहाणू से बराबर सेवा-लाभ ले रहे थे और विचरण-विहार में साथ चलते हुए आचार्यप्रवर आदि संत-मुनिराजों की भक्ति में समर्पित रहे। घोलवड़ी बोर्डी के श्रद्धालुओं ने घर आई गंगा की सेवा-भक्ति में अच्छा उत्साह प्रदर्शित किया। उमरगांव से संजाण होते हुए भीलाड़ पधारे, जहाँ आचार्य महाप्रज्ञ जी के आज्ञानुवर्ती स्वामी किशनलाल जी म.सा., श्री दिनेशमुनि जी म.सा. आदि ठाणा ४ मध्याह्न में तथा युवाचार्य महाश्रमण जी सायंकाल आचार्यश्री के दर्शनार्थ पधारे। करमखेला में ज्ञान-गंगा प्रवाहित करते हुए आचार्य भगवन्त वापी पधारे। व्याख्यात्री महासती श्री तेजकंवर जी म.सा. आदि ठाणा के वापी चातुर्मास पश्चात् रत्नवंश के नायक के वापी पधारने की सूचना से उल्लसित औद्योगिक नगरी वापी के सुज्ञ श्रावकों ने विचरण-विहार में एवं वापी पधारने के बाद सेवा-भक्ति में कोई कोर-कसर नहीं रखी। वापी श्री संघ का आग्रह रहा कि औद्योगिक क्षेत्र में अग्रणी वापी को आचार्यप्रवर कुछ और समय दें, किन्तु आचार्यप्रवर ने सूरत में दीक्षा की स्वीकृति के संदर्भ में विहार की आवश्यकता बताते कहा कि आप संत-समागम से लाभ उठाकर सामायिक-स्वाध्याय को जीवन का अंग बनायें तो आपको सदा आगे बढ़ने की स्वतः प्रेरणा मिलेगी। वापी में सुज्ञ श्रावक- श्राविकाओं ने व्रत-नियम की श्रद्धा समर्पित कर धर्म-प्रभावना की। उदवाड़ा-अतुल फरसते आचार्यप्रवर बलसाड़ पधारे, जहाँ भी ज्ञान-क्रिया सम्पन्न आचार्यप्रवर आदि संतरत्नों की संयम-साधना से बलसाड़ वासियों ने व्रत-प्रत्याख्यान स्वीकार करने में उत्साह दर्शाया।

डूंगरी-चीखली, खारेल, अष्टगांव, पांजरापोल आदि मध्यान्तर के क्षेत्रों में सामायिक- स्वाध्याय और व्यसनमुक्त जीवन की प्रेरणा करते हुए आचार्यप्रवर नवसारी पधारे। नवसारी श्रीसंघ ने दीक्षा महोत्सव की लाभ-प्राप्ति हेतु अथक प्रयास किया, लेकिन दीक्षा-महोत्सव का लाभ सूरत श्रीसंघ को दिए जाने की

घोषणा से नवसारी के श्रद्धालुओं ने सत्संग-सेवा और संत-समागम के सुयोग का भावनापूर्वक लाभ उठाया। नवसारी श्रीसंघ के अध्यक्ष श्री महेन्द्र जी मेहता ने आचार्यप्रवर के मुखारविन्द से तपों में श्रेष्ठ ब्रह्मचर्य व्रत के महत्त्व को समझकर सपत्नीक शीलव्रत का खंद तो किया ही, हजारों कर्मकारों के स्वामी ने व्यवसाय से निवृत्ति करके धर्म-साधना-आराधना में अधिक समय देने के संकल्प से जिनशासन की महती प्रभावना की है। प्रवचन में आबाल-वृद्ध सबकी अच्छी रुचि के कारण नवसारी में त्याग-तप की अपूर्व प्रभावना हुई। आचार्य भगवन्त पूज्य श्री हस्तीमल जी म.सा. के ९३वें जन्म-दिवस के प्रसंग से हजारों श्रावक-श्राविकाओं ने सामायिक-स्वाध्याय के प्रबल प्रेरक इतिहास मार्तण्ड युगमनीषी आचार्य भगवन्त के गुणकीर्तन-गुणस्मरण तो किये ही व्रत-नियम-युक्त श्रद्धा समर्पित कर आराध्य आचार्य भगवन्त के प्रति श्रद्धाभिव्यक्ति की। जलगांव, धुलिया, मुम्बई, चेन्नई, बैंगलोर, सूरत सहित अनेक ग्राम-नगरों के श्रीसंघों ने एवं श्रद्धालुओं ने नवसारी पहुंचकर युगमनीषी आचार्यभगवन्त का जन्म-दिवस त्याग-तप के साथ मनाया। नवसारी से विहार कर आचार्यप्रवर मरोली, भेस्तान आदि क्षेत्रों को पावन करते हुए १ फरवरी को औद्योगिक नगरी सूरत के उपनगर उधना पधार गए हैं।

- **परम श्रद्धेय उपाध्याय पं. रत्न श्री मानचन्द्र जी म.सा.**, सेवाभावी श्री मंगलमुनि जी म.सा., विद्याभिलाषी श्री यशवन्तमुनि जी म.सा. ठाणा ३ मध्यप्रदेश के जनपदों में ज्ञान-गंगा प्रवाहित करते हुए आचार्य भगवन्त के ९३वें जन्म-दिवस के पूर्व इन्दौर पधारे। मार्ग में सेंधवा, बालकवाड़ा, छोटी कसरावद, महामंडलेश्वर, बड़वाह, करही आदि निमाड़ के क्षेत्रों के श्रावक-श्राविकाओं ने सत्संग-सेवा और संत-समागम का अपूर्व लाभ उठाया। इन्दौर-उज्जैन आदि क्षेत्रों के श्रावकों ने अपनी विनति उपाध्यायप्रवर के श्रीचरणों में रखी वहीं चातुर्मास की विनति हेतु कोटा, पीपाड़, जोधपुर अपना-अपना प्रयास कर रहे हैं। उपाध्याय प्रवर विनतियों के उत्तर में इतना ही फरमा रहे हैं कि मैं मारवाड़ के लक्ष्य से विहार कर रहा हूँ। इन्दौरवासियों ने श्रद्धा-भक्ति पूर्वक जिनवाणी श्रवण का लाभ तो लिया ही व्रत-प्रत्याख्यान अंगीकार कर गुरुभक्ति का परिचय भी दिया। प्रतिपल स्मरणीय आचार्य भगवन्त के जन्म-दिवस पर जानकी नगर में समीपवर्ती-सुदूरवर्ती श्रीसंघों एवं श्रद्धालुओं ने उपाध्याय प्रवर के श्रीचरणों में पहुंचकर युगमनीषी आचार्य भगवन्त के जन्म-दिवस पर श्रद्धा समर्पित की।

शहर एवं उपनगरों की पुरजोर विनतियों के कारण उपाध्याय प्रवर ने भक्तों की भावना का समादर किया और इन्दौर से उज्जैन के लिए विहार कर दिया है। आचार्य भगवन्त श्री हस्तीमल जी म.सा. का दीक्षा-दिवस उज्जैन में हो ऐसी संभावना है। कोटा की ओर अग्र विहार की संभावना लगती है।

- **मधुरव्याख्यानी श्री गौतममुनि जी म.सा.**, तपस्वी श्री प्रकाशमुनि जी म.सा. ठाणा २ ने वर्द्धमान भवन पावटा विराजते समय शहर क्षेत्र के श्रावकों की विनति के कारण पौष शुक्ला चतुर्दशी घोड़ों का चौक करने की स्वीकृति फरमा दी। मुनि मण्डल की स्वीकृति को ध्यान में रखकर श्रीसंघ की विनति पर **शासनप्रभाविका महासती श्री मैनासुन्दरीजी म.सा.** आदि ठाणा ४ ने कुम्भट भवन-सरदारपुरा विहार किया, बीच में जालोरी गेट स्थित रामनाथ मेहता भवन विराजकर घोड़ों का चौक पधारे। मधुरव्याख्यानी श्री गौतममुनि जी म. सा. ठाणा २ पावटा से विहार कर १३ जनवरी को घोड़ों का चौक पधारे। **साध्वीप्रमुखा सरलहृदया महासती श्री सायरकंवर जी म.सा.** आदि ठाणा ३ यहाँ पर पहले से विराजित थे। दिनांक १४ जनवरी को विरक्ता बहिन सुश्री पायल खींवसरा, संघसेवी सुश्रावक श्री कांतिलाल जी चौधरी, धुलिया एवं खींवसरा परिवार के कुछ सदस्य संत-सती दर्शन-वन्दन की भावना से जोधपुर पधारे। दिनांक १५ जनवरी को संत-सतीवृन्द की सन्निधि में मुमुक्षु बहिन का श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ ने माल्यार्पण कर स्वागत किया, चूंदड़ी ओढ़ाकर बहुमान किया और मुमुक्षु बहिन के प्रति शुभकामना व्यक्त की। संत-सतीवृन्द ने संयम की महिमा बताई, वहीं मुमुक्षु बहिन के विचार श्रवण कर उनकी उत्कृष्ट भावना का परिचय मिला।

प्रतिपल स्मरणीय आचार्य भगवन्त के ६३वें दीक्षा दिवस पर प्रवचन सभा में ऊपर का हॉल खचाखच भरा था। संघाध्यक्ष श्री रतनलाल जी बाफना, संघ संरक्षक श्री चांदमल जी कर्णावट, स्थानीय संघाध्यक्ष डॉ. सम्पतसिंह जी भाण्डावत, जोधपुर संघ के परामर्शदाता न्यायाधिपति श्री चांदमल जी लोढ़ा, सुश्रावक श्री भागचन्द जी कोचेटा, मदनगंज, स्वाध्याय संघ के संयोजक श्रीमती सुशीला जी बोहरा सहित अनेक वक्ताओं ने आराध्य आचार्य भगवन्त के प्रति अपनी श्रद्धाभिव्यक्ति की। मधुरव्याख्यानी श्री गौतममुनि जी म.सा. और शासनप्रभाविका महासती श्री मैनासुन्दरीजी आदि महासतियों ने ने युगमनीषी आचार्य गुरु हस्ती ने व्यक्तित्व-कृतित्व पर प्रकाश डालते हुए गुणग्रहण की प्रभावी प्रेरणा की। आचार्य भगवन्त के जीवन पर प्रश्नमंच, प्रश्नोत्तर, अंत्याक्षरी के कार्यक्रम स्वाध्याय संघ के तत्त्वावधान में रखे गये। सायं सामूहिक प्रतिक्रमण पश्चात् भजन के माध्यम से गुरु गुणगान किये गए। दया-संवर, उपवास-पौषध अच्छी संख्या में हुए तथा पांच-पांच सामायिक करने वाले श्रावक-श्राविकाओं ने अच्छा उत्साह दर्शाया।

संघ की पुरजोर विनति मान्य करते मुनि मण्डल ने आचार्य भगवन्त के दीक्षा-दिवस तक घोड़ों का चौक विराजने की स्वीकृति फरमा दी है, तत्पश्चात् जोधपुर के उपनगरों में विहार की संभावना है।

- **सेवाभावी महासती श्री संतोषकंवर जी म.सा.** आदि ठाणा ४ पीपाड़ सिटी से गोटन श्री संघ की विनति मान्य कर साथीन-कोसाना, खवासपुरा, तालकिया आदि क्षेत्र फरसकर गोटन पधारे, जिससे वहाँ आचार्य भगवन्त के जन्म-दिवस पर त्याग-तप की अच्छी प्रभावना रही।
- **शान्तस्वभावी तपस्विनी महासती श्री शान्तिकंवर जी म.सा.** आदि ठाणा ४ क्रियोद्धारक भूमि भोपालगढ़ सुखशांति पूर्वक विराजमान हैं। श्री जैन रत्न विद्यालय के हीरक जयन्ती समारोह के कारण विद्यालय परिवार के अनेक पूर्व छात्रों ने आचार्य भगवन्त के जन्म-दिवस पर भोपालगढ़ के श्रावक-श्राविकाओं के साथ व्रत-नियम युक्त श्रद्धा समर्पित की।
- **व्याख्यात्री महासती श्री तेजकंवर जी म.सा.** के विहार की अनुकूलता नहीं होने से विहार बहुत धीरे-धीरे चल रहा है। व्याख्यात्री महासती श्री तेजकंवर जी म.सा. दीक्षा प्रसंग तक सूरत पधारना चाहते हैं, लेकिन अन्य सतियाँ समय के साथ पधार सकें इस भावना से व्याख्यात्री महासती श्री मुक्तिप्रभा जी म.सा., महासती श्री विमलेशप्रभा जी म.सा. को दो अलग-अलग संघाड़ों में विहार करवाया ताकि स्वयं यदि नहीं पहुंच सके तो अन्य सतियाँ दीक्षा-प्रसंग पर समय के साथ पहुंच जायें।
- **व्याख्यात्री महासती श्री रतनकंवर जी म.सा.** आदि ठाणा ५ अहमदाबाद सुखशांति पूर्वक विराजमान हैं। महासती श्री उषाजी म.सा. के स्वास्थ्य में समाधि बनी हुई है। अहमदाबाद के सुज्ञ श्रावक-श्राविकाओं और चिकित्सकों का श्रमणोचित उपचार में सहयोग प्रशंसनीय है।
- **व्याख्यात्री महासती श्री सौभाग्यवती जी म.सा.** आदि ठाणा ४ ने जोधपुर के कमला नेहरू नगर क्षेत्र से सुभाषनगर, बासनी, सालावास, लूनी, खाराबेरा विहार किया। वहाँ आचार्य भगवन्त के जन्म-दिवस पर तप-त्याग के पश्चात् गुड़ा फरसते पुनः सरस्वती नगर पधारे हैं। व्याख्यात्री महासती श्री सौभाग्यवती जी म.सा. का एक बार दन्त-चिकित्सक से पुनः परामर्श कर अग्र विहार ब्यावर की ओर संभावित है।
- **व्याख्यात्री महासती श्री सोहनकंवर जी म.सा.** आदि ठाणा ५ भोपालगढ़ से बारनी-पीपाड़-मादलिया-बोरून्दा इन्दावड़ क्षेत्र फरसकर ४ जनवरी को मेड़ता पधारे एवं ६ जनवरी को मेड़ता से विहार कर पटेलनगर, लाम्पोलाई, पादुकंला, भैरून्दा, पुष्कर आदि मध्यान्तर के क्षेत्र पावन कर अजमेर पधारे हैं। पौष शुक्ला चतुर्दशी मेड़तासिटी करके महासती श्री रुचिता जी म.सा. आदि ठाणा ४ २२.१.२००३ को अजमेर पधार गये हैं।
- **व्याख्यात्री महासती श्री ज्ञानलता जी म.सा.** आदि ठाणा ३ पोरवाल क्षेत्र से

पौष शुक्ला चतुर्दशी के पूर्व भीलवाड़ा पधारे, जहाँ आचार्य भगवन्त का जन्म-दिवस मनाकर महासती मण्डल उदयपुर की ओर विहाररत है।

- **व्याख्यात्री महासती श्री निःशल्यवती जी म.सा.** आदि ठाणा ३ के सान्निध्य में सवाईमाधोपुर में आचार्य भगवन्त का जन्म-दिवस मनाया गया। आचार्य भगवन्त के दीक्षा-दिवस पर बजरिया विराज कर महासती जी के पल्लीवाल क्षेत्र की ओर बढ़ने की संभावना है।

–अरुण मेहता, महामंत्री, अ.भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ

आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा. की ९३वीं जन्म-जयन्ती तप-त्याग पूर्वक मनाई गई

युगपुरुष आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा. की ९३वीं जन्म-जयन्ती देश एवं विदेश के अनेक ग्राम-नगरों में सामायिक-स्वाध्याय एवं तप-त्याग के साथ मनाई गई। इस दिन उपवास, पौषध, दयाव्रत, संवर एवं अनेक प्रकार के व्रत-प्रत्याख्यान अंगीकार कर अपने जीवन को आध्यात्मिक दृष्टि से अनेक लोगों ने उन्नत बनाया तथा आचार्यप्रवर के गुणगान कर उनके जीवन से प्रेरणा अंगीकार की। आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के सान्निध्य में नवसारी में , उपाध्यायपव्रर श्री मानचन्द्र जी म.सा. के सान्निध्य में इन्दौर में तथा मधुरव्याख्यानी श्री गौतममुनि जी म.सा. तथा साध्वीप्रमुखा सरलहृदया महासती श्री सायरकंवर जी म.सा. के सान्निध्य में जोधपुर में आचार्यप्रवर का जन्म-दिवस मनाया गया। श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, जोधपुर द्वारा जोधपुर में व्याख्यान के पश्चात् आचार्यप्रवर के जीवन-चरित्र पर लिखित परीक्षा का आयोजन किया गया। दोपहर में विभिन्न ग्रुप बनाकर प्रश्नमंच के माध्यम से आचार्यप्रवर के जीवन पर प्रकाश डाला गया। धार्मिक अन्त्याक्षरी का भी आयोजन हुआ।

मुणोत फाउण्डेशन, मुम्बई द्वारा धार्मिक पाठशालाएँ संचालित

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर के अन्तर्गत श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, जोधपुर द्वारा मुणोत फाउण्डेशन, मुम्बई के सहयोग से बालक-बालिकाओं को नैतिक एवं धार्मिक दृष्टि से सुसंस्कारित करने के उद्देश्य से श्री महावीर जैन धार्मिक पाठशालाओं का संचालन किया जा रहा है। ये पाठशालाएँ धर्म-शिक्षण के क्षेत्र में अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुई हैं। फाउण्डेशन के द्वारा वर्तमान में २४ पाठशालाएँ चल रही हैं। इन पाठशालाओं का स्वाध्याय संघ के द्वारा समय-समय पर निरीक्षण कर मार्गदर्शन किया जाता है। प्रायः स्थानीय अध्यापक ही शिक्षण का कार्य करते हैं। जो संघ अपने यहाँ धार्मिक पाठशालाएँ चलाने में रुचि रखते हों वे स्वाध्याय संघ, जोधपुर से सम्पर्क स्थापित कर सकते हैं। **–सुशीला बोहरा, संयोजक**
श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, घोड़ों का चौक, जोधपुर–342001(राज.)

श्राविका-मण्डल द्वारा १२ व्रत धारण करने का अभियान

अ.भा. श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल द्वारा १२ व्रत व १४ नियम अंगीकार करने हेतु श्राविकाओं को प्रेरणा की गई। फलस्वरूप अब तक पीपाड़ में ५६, पाली में ३६, चौथ का बरवाड़ा में २३, सवाईमाधोपुर में २२, भोपालगढ़ में १८ व ताहराबाद में ५०, जायखेड़ा में ३२, जोधपुर में ७२ कुल ३१२ बारह व्रती बने हैं। बारह व्रत अंगीकार करने हेतु श्राविकाएं प्रेरणा कर रही हैं और व्रत अंगीकार करने वाली प्रत्येक श्राविका को निर्ग्रन्थ भजनावली पुस्तक प्रेषित की जा रही है।

सभी शाखाओं के शाखाध्यक्ष/मंत्री से निवेदन है कि कृपया अपने-२ क्षेत्र की रिपोर्ट व १२ व्रत अंगीकार करने वाली श्राविकाओं की सूची हमें कार्यालय में शीघ्र भिजवावें ताकि उन्हें भी पारितोषिक भिजवाया जा सके।

श्राविका मण्डल, जोधपुर द्वारा समय-समय पर सन्त-सतीवृन्द की जीवनी पर आधारित धार्मिक प्रश्नोत्तर कार्यक्रम विभिन्न केन्द्रों पर आयोजित किये जाते हैं। प्रश्नोत्तर कार्यक्रम के अन्तर्गत सर्वश्रेष्ठ अंक प्राप्त करने वाली श्राविका को श्राविका मण्डल द्वारा पारितोषिक प्रदान किया जाता है। सम्प्रति रत्नवंश के धर्माचार्य, पट्टावली व भजन के आधार पर प्रश्नोत्तरी कार्यक्रम रखा गया था, जिसमें भोपालगढ़ शाखा से शशिकलाजी लुंकड़ तथा जलगांव से सौ. बबीता महेन्द्र जी सुराना को श्राविका मण्डल की ओर से पुरस्कृत किया गया।

-अकलकंवर मोदी, महासचिव

आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड की आगामी परीक्षा २७ जुलाई २००३ को

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड की कक्षा १ से ११ तक की आगामी परीक्षा २७ जुलाई २००३, रविवार को दोपहर १२ से ३ बजे तक आयोजित की जायेगी।

१६ जनवरी २००३ को आयोजित परीक्षा में जिन्होंने भाग लिया है, उन्हें आगामी परीक्षा हेतु अब आवेदन-पत्र भरकर भिजवाने की आवश्यकता नहीं है। उत्तीर्ण होने वाले परीक्षार्थियों को अगली कक्षा का तथा अनुत्तीर्ण होने वाले परीक्षार्थियों को पुनः उसी कक्षा का प्रवेश-पत्र भेजने की व्यवस्था बोर्ड कार्यालय द्वारा की जा रही है। नये परीक्षार्थियों एवं दसवीं-ग्यारहवीं कक्षा की परीक्षा देने वालों को ही आवेदन-पत्र भरकर बोर्ड कार्यालय को भिजवाना आवश्यक है। विस्तृत जानकारी के लिये सम्पर्क करें-**विमला मेहता, संयोजक/नवरतन डागा, सचिव, अ.भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, घोड़ों का चौक, जोधपुर-342001 (राज.) फोन नं. 0291-2630490, फैक्स-2636763**

विशाल पशु चिकित्सा एवं रक्तदान शविर का आयोजन

श्री जैन रत्न युवक परिषद्, जयपुर के तत्त्वावधान में ५ जनवरी २००३ को जयपुर से ३५ कि.मी. दूर ग्राम पंचायत साम्भरियां, तहसील-बस्सी में विशाल पशु-चिकित्सा शिविर लगाया गया। शिविर का उद्घाटन पशु-पालन विभाग के उप-

निदेशक डॉ. आलोक जुनेजा ने किया। यह शिविर स्व. श्री माणकचन्द जी सा डागा की पुण्य स्मृति में श्री विनयचन्द जी डागा के आर्थिक सहयोग से लगाया गया। शिविर में पशु चिकित्सा विशेषज्ञों ने लगभग ३००० पशुओं की चिकित्सा की तथा टीकाकरण आदि की निःशुल्क सुविधा प्रदान की गई। राजस्थान के पशुपालन विभाग के राज्यमंत्री हरिसिंह जी कुम्हेर ने शिविर का अवलोकन किया। समापन कार्यक्रम में राज्यमंत्रीजी, ग्राम सरपंच एवं श्री विमलचन्द जी डागा ने सम्बोधित किया।

१७ जनवरी पौष शुक्ला चतुर्दशी को आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा. के ९३वें जन्म-दिवस पर विशाल रक्तदान शिविर एवं नेत्रदान संकल्प शिविर आयोजित किया गया। शिविर में लगभग १०० युवक-युवतियों ने रक्तदान किया एवं इतने ही नेत्रदान संकल्प पत्र भरे गए। ***-अनिल बम्ब, सचिव***

अनेकान्तवाद पर अन्तर्राष्ट्रीय संगोष्ठी

जैन विश्वभारती इंस्टीट्यूट, लाडनूँ द्वारा बड़ौदा के प्रताप विलास पैलेस में ६ से ६ दिसम्बर २००२ तक 'Anekant : A Dialogue on Human Concerns' विषय पर अन्तर्राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन किया गया। संगोष्ठी का उद्घाटन अन्तरिक्ष वैज्ञानिक वाई.एस. राजन ने किया। ६ सत्रों में आयोजित इस संगोष्ठी में अनेकान्त के विभिन्न पक्षों पर ३० से अधिक शोध-पत्र प्रस्तुत किए गए। संगोष्ठी में क्रिस्टोफर की चेपल (अमेरिका), पी.एस.जैनी (अमेरिका), प्रो. जुआन मिग्वेल डे मोरा (मेक्सिको), प्रो. फ्यूजीनाग सिन (जापान), डॉ. सेलिना थील्मेन (इटली), एलेक्जेण्डर फिशर (जर्मनी), डॉ. रान गीब्ज (यू.के.), प्रो. तारा सेठिया (अमेरिका) आदि विदेशी विद्वानों एवं डॉ. सत्यरंजन बनर्जी (कोलकाता), प्रो. दयानन्द भार्गव (लाडनूं), प्रो. सागरमल जैन (शाजापुर), डॉ. नन्दलाल जैन (रीवा), प्रो. वी.एन.झा (दिल्ली), प्रो. तुषार कान्ति सरकार (कोलकाता), डॉ. नितिन जे. व्यास (बडोदरा), प्रो. वाइ.एस.शास्त्री (अहमदाबाद), प्रो. प्रेमसुमन जैन (उदयपुर) आदि भारतीय विद्वानों ने भाग लिया। जिनवाणी के सम्पादक डॉ. धर्मचन्द जैन ने भी संगोष्ठी में भाग लेकर 'अनेकान्तवाद के तार्किक आधार' विषय पर अपना शोध पत्र प्रस्तुत किया। संगोष्ठी को समय-समय पर आचार्य श्री महाप्रज्ञ जी का सान्निध्य प्राप्त था। सभी व्यवस्थाएँ उत्तम थी।

ग्रीष्मकाल में दिल्ली में प्राकृत के अध्ययन का सुअवसर

भोगीलाल लहेरचन्द इंस्टीट्यूट ऑफ इण्डोलॉजी, दिल्ली द्वारा २५ मई से १५ जून २००३ तक ग्रीष्मकाल में प्राकृत अध्ययन शाला का आयोजन किया जा रहा है। अध्ययनशाला में निम्नांकित पाठ्यक्रम संचालित होंगे-

१. प्राकृत भाषा और साहित्य (ऐलीमेण्ट्री कोर्स)

२. प्राकृत भाषा और साहित्य (एडवांस कोर्स)

उपर्युक्त पाठ्यक्रमों में अध्ययन हेतु संस्कृत (दर्शन ग्रुप), प्राकृत, पाली,

इतिहास में एम.ए. अथवा आचार्य उत्तीर्ण छात्र या शोध छात्रों से आवेदन पत्र १५.४.२००३ तक आमंत्रित हैं। आवेदक को हिन्दी व अंग्रेजी दोनों भाषाओं का ज्ञान होना आवश्यक है। अध्ययन शाला में निम्नांकित सुविधाएँ प्रदान की जाती हैं-

१. आवास एवं भोजन की निःशुल्क व्यवस्था।

२. द्वितीय श्रेणी का रेलवे किराया अथवा बस किराया (लघुतम मार्ग से)

आवेदन पत्र अपने नाम, जन्म-तिथि, शैक्षिक योग्यता (प्रमाण पत्र एवं अंकतालिकाओं की सत्यापित प्रतिलिपि सहित), अध्यापन/शोध अनुभव, पता आदि की जानकारी के साथ विभागाध्यक्ष से प्रमाणित करा कर प्रेषित किए जा सकते हैं। सम्पर्क सूत्र-**डॉ. विमलप्रकाश जैन, निदेशक, भोगीलाल लहेरचन्द इंस्टीट्यूट, 20वां कि.मी. जी.टी. करनाल रोड़, पो. अलीपुर, दिल्ली-110036, फोन नं.27202065**

१०० रुपये में प्रश्न भंडार प्राप्त कीजिये

श्री कर्नाटक जैन स्वाध्याय संघ द्वारा गत ६ वर्षों से मासिक पत्राचार प्रश्न प्रतियोगिता का संचालन किया जा रहा है। इस योजना में नवकार मंत्र से प्रारंभ करके क्रमबद्ध रूप से सूत्र, तत्त्व, काव्य, स्तोत्र, थोकड़ा, आगम, जीवन चरित्र व इतिहास आदि अनेक विषयों पर प्रश्नपत्र जारी किए गये। इस ज्ञान यज्ञ में भारत के कोने-कोने के हजारों स्वाध्यायी भाई-बहनों ने लाभ लेकर अपनी रत्नत्रय आराधना में विकास प्राप्त किया व आज भी कर रहे हैं। आगामी माह से यह योजना अपने दसवें वर्ष में प्रवेश कर रही है। इसी अवसर पर संघ ने एक स्वर्णिम सौगात समाज को अर्पित करने की योजना बनाई है। इस योजना में अब तक प्रकाशित १५० प्रश्न पत्रों का खजाना, जिसमें लगभग २५० पृष्ठों में ३००० प्रश्नों का भंडार भरा है, संघ आवश्यक एवं इच्छुक ज्ञान प्रेमियों को भेंट करना चाहता है। कोई भी संस्था, व्यक्ति, पाठशाला अथवा प्रकाशक मात्र रुपये १००/- डाक खर्च एवं व्यवस्था शुल्क के रूप में भेजकर पूरी फाइल प्राप्त कर सकते हैं। इन प्रश्नों के माध्यम से स्वाध्यायी अपना एवं समाज का ज्ञानवर्द्धन कर सकते हैं। संस्थाएँ व स्वाध्याय संघ अपने स्तर पर प्रश्नोत्तरी आदि कार्यक्रम संचालित कर सकते हैं।

ड्राफ्ट या मनिआर्डर श्री कर्नाटक जैन स्वाध्याय संघ के नाम से भेजें। भविष्य में इन प्रश्नों की उत्तर पुस्तिकाएँ प्रकाशित करने की पूरी संभावना है, प्रश्न पत्र मंगवाने वालों को उत्तर पुस्तिकाएँ यथा अवसर निःशुल्क भेंट स्वरूप दी जाएगी। प्रतियोगिता में भाग लेने के इच्छुक व्यक्ति अलग से रु.१००/-वार्षिक अथवा रु. १०००/- देकर आजीवन सदस्य बन सकते हैं। मासिक पत्र जांच उपरांत सही उत्तर लिखकर पुनः विद्यार्थी के उपयोग हेतु भेज दिये जाते हैं। **प्रस्तोता एवं संयोजक- शांतिलाल बोहरा, श्री कर्नाटक जैन स्वाध्याय संघ, गणेशमल चोरड़िया जैन भवन, 157 हुर्रियोपेट बेंगलोर-560053, फोन 080-2201970 (प्रातः 10.00 से 2.00 बजे) 080-3112653 (रात्रि 9.30 से 10.30, प्रातः 8.00 से 9.00 बजे)**

अहिंसा इण्टरनेशनल द्वारा वर्ष २००१ के पुरस्कारों के लिये नाम आमंत्रित

1. **अहिंसा इण्टरनेशनल डिप्टीमल आदीश्वर लाल जैन साहित्य पुरस्कार।**

(राशि 31000)

जैन साहित्य के विद्वान को उनके समग्र साहित्य अथवा एक कृति की श्रेष्ठता के आधार पर। लिखित पुस्तकों की सूची तथा अपनी-अपनी श्रेष्ठ पुस्तकें भेजें।

2. **अहिंसा इण्टरनेशनल भगवानदास शोभालाल जैन शाकाहार पुरस्कार।**

(राशि 21000)

शाकाहार प्रसार के क्षेत्र में कार्य कर रहे कर्मठ कार्यकर्ता को उनके कार्य की श्रेष्ठता के आधार पर।

3. **अहिंसा इण्टरनेशनल रघुबीरसिंह जैन जीव रक्षा पुरस्कार। (राशि 21000)**

जीव रक्षा के क्षेत्र में कार्य कर रहे कर्मठ कार्यकर्ता को उनके कार्य की श्रेष्ठता के आधार पर।

4. **अहिंसा इण्टरनेशनल प्रेमचन्द जैन पत्रकारिता पुरस्कार। (राशि 21000)**

रचनात्मक जैन पत्रकारिता की श्रेष्ठता के आधार पर।

नाम का सुझाव स्वयं लेखक/कार्यकर्ता/संस्था अथवा अन्य व्यक्ति द्वारा १५ मार्च २००३ तक निम्न पते पर लेखक/कार्यकर्ता/पत्रकार के पूरे नाम व पते, जीवन-परिचय, संबंधित क्षेत्र में कार्य विवरण व पासपोर्ट आकार के फोटो सहित आमंत्रित हैं। पुरस्कार नई दिल्ली में भव्य समारोह में भेंट किये जायेंगे।

सम्पर्क-1. प्रदीप कुमार जैन सचिव, 4687-उमराव गली, पहाड़ी धीरज, दिल्ली, दूरभाष-23531678, 23626813, 2. सतीश कुमार जैन, सचिव, सी-3/बसंत कुंज 3129, नई दिल्ली, दूरभाष 26122843

चन्दनबाला के जीवन पर वीडियो सीडी

भगवान महावीर की प्रमुख शिष्या आर्या चन्दनबाला के जीवन पर एनीमेशन वीडियो सीडी का निर्माण किया गया है। जैनधर्म पर बनी यह प्रथम एनीमेशन सीडी ६० मिनट की अवधि की है, जिसमें चन्दनबाला के सम्पूर्ण जीवन का सजीव चित्रण किया गया है। इस सीडी का निर्माण कम्प्यूटर क्रॉनिकल्स ३६, रामवाड़ी, कमरा नं. २५, कालबादेवी रोड़, मुम्बई-४००००२ ने किया है।

संक्षिप्त समाचार

दिल्ली—पूना के सर्वजीव मंगल प्रतिष्ठान के संस्थापक अध्यक्ष डॉ. कल्याण गंगवाल की 'शाकाहार ही क्यों?' पुस्तक का लोकार्पण ६ सितम्बर को जागतिक विश्वशान्ति एवं सर्वजीव-सम्मान परिषद् के अधिवेशन में भारत के राष्ट्रपति डॉ. ए.पी.जे. अब्दुलकलाम ने किया। राष्ट्रपति जी ने बाद में बातचीत में डॉ. गंगवाल से कहा- "मुझे शाकाहार के प्रति विशेष आस्था है और मैं कट्टर

शाकाहारी हूँ।" *-डॉ. के.एम.गंगवाल*

बड़ौदा—श्रमण संघ के प्रवर्तक श्री उमेशमुनि जी म.सा. 'अणु' कुशलगढ़ (राज.) का चातुर्मास सम्पन्न कर रतलाम होते हुए बड़ौदा (गुजरात) पधार रहे हैं। फाल्गुनी पूर्णिमा बड़ौदा में है। अक्षयतृतीया पर अंकलेश्वर पधारेंगे। *-सुरेन्द्र कड़ावत, मंत्री*

कोलकाता—आचार्य श्री नानालाल जी म.सा. की तृतीय पुण्य-स्मृति के उपलक्ष्य में २६ दिसम्बर २००२ को श्री जैन हॉस्पिटल एण्ड रिसर्च सेण्टर में निःशुल्क नेत्र चिकित्सा शिविर एवं विकलांग शिविर का आयोजन किया गया। दोनों शिविर उत्साह के साथ सफलतापूर्वक सम्पन्न हुए। *-विनोद भिन्नी, मंत्री*

जोधपुर— श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल द्वारा महिलाओं में धार्मिक व नैतिक ज्ञानार्जन हेतु वर्ष में दो बार शिविर का आयोजन किया जाता है। इसी कार्यक्रम के अन्तर्गत शीतकालीन सप्तदिवसीय शिविर दिनांक २५ दिसम्बर से ३१ दिसम्बर तक नेहरु पार्क स्थानक में आयोजित किया गया। शिविर में अ.भा. श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड के कक्षा पहली से आठवीं तक के पाठ्यक्रमानुसार शिविरार्थियों को प्रबुद्ध अध्यापकों द्वारा अध्यापन किया गया। इस शिविर में ६० शिविरार्थियों ने पूर्ण उमंग-उत्साह से भाग लिया। शिविर का समापन समारोह ३१ दिसम्बर को रखा गया था। इस शिविर का सारा व्यय श्रीमान सुरेन्द्र जी मेहता की ओर से किया गया। *-सुनीता मेहता, अध्यक्ष*

करौली (राज.)— श्री श्वे. स्थानकवासी जैन संघ, करौली द्वारा श्री स्था. जैन स्वाध्याय संघ, जोधपुर के माध्यम से २५ से २६ दिसम्बर तक स्थानीय धार्मिक शिक्षण शिविर लगाया गया। शिविर में श्री जगदीशप्रसाद जी जैन, आवासन मण्डल, सवाईमाधोपुर तथा श्री अमोलकचन्द जी जैन, जरखोदा वाले, आवासन मण्डल, सवाईमाधोपुर द्वारा अध्यापन किया गया। शिविर में २६ शिविरार्थियों ने भाग लिया। *-शान्ताप्रसाद जैन*

जयपुर— दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्रीमहावीरजी द्वारा संचालित अपभ्रंश साहित्य अकादमी द्वारा 'पत्राचार प्राकृत सर्टिफिकेट पाठ्यक्रम' प्रारम्भ किया जा रहा है। सत्र १ जुलाई २००३ से प्रारम्भ होगा। इसमें प्राकृत, संस्कृत, हिन्दी एवं अन्य भाषाओं/ विषयों के प्राध्यापक, अपभ्रंश-प्राकृत शोधार्थी एवं संस्थानों में कार्यरत विद्वान् इसमें सम्मिलित हो सकेंगे। नियमावली एवं आवेदनपत्र दिनांक २५ मार्च से १५ अप्रेल २००३ तक अकादमी कार्यालय, दिगम्बर जैन नसियां भट्टारकजी, सवाई रामसिंह रोड़, जयपुर-३०२००४ से प्राप्त करें। कार्यालय में आवेदन पत्र पहुंचने की अन्तिम तारीख १५ मई २००३ हैं। *-डॉ. कमलचन्द सोगाणी, संयोजक*

चेन्नई— श्री दक्षिण भारत जैन स्वाध्याय संघ के तत्त्वावधान में श्री गणेशीबाई गेलड़ा जैन बालिका विद्यालय में २३ से ३१ दिसम्बर २००२ तक धार्मिक शिक्षण शिविर आयोजित किया गया, जिसमें लगभग ३२४ बालक-बालिकाओं ने भाग लिया।

- रीखबचन्द लोढ़ा, मंत्री

बधाई

उदयपुर– श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ की उदयपुर शाखा के मानद सचिव श्री राजेन्द्रमल जी कुम्भट, रोटरी अन्तर्राष्ट्रीय जिला ३०५० के आगामी सत्र १ जुलाई २००३ से जून २००४ के लिये सहायक प्रान्तपाल नियुक्त किए गए हैं। उनकी नियुक्ति आगामी सत्र के नए प्रान्तपाल अरूण गुप्ता ने की है। इस उत्तरदायित्व के अन्तर्गत श्री कुम्भट स्थानीय तीनों रोटरी क्लब के अलावा नाथद्वारा और चित्तौड़गढ़ के रोटरी क्लबों का मार्गदर्शन करेंगे।

बैंगलोर–राजस्थान के मूल निवासी श्री पारसमल जी सुखाणी, रायचूर को कर्नाटक सरकार ने हट्टी गोल्ड माइन्स लिमिटेड का अध्यक्ष नियुक्त किया है। श्री सुखाणी जी ने भारत की एकमात्र कार्यरत स्वर्ण खदान का कार्यभार सम्हाल लिया है। आप १६७६ से १६८३ तक रायचूर नगरपालिका के चेयरमेन रहे हैं।

श्रद्धांजलि

दिल्ली–संघ शास्ता मुनि श्री रामकृष्ण जी महाराज के गुरुभ्राता सेवायोगी सरल-आत्मा भगत श्री शिवचन्द जी महाराज का १४ जनवरी २००३ को दिल्ली के सरस्वती विहार में संथारा-समाधि के साथ देवलोकगमन हो गया। उनकी देह-आयु ८८ वर्ष एवं संयम-पर्याय ६४ वर्ष थी। पंजाब मुनि परम्परा में वे सर्व-ज्येष्ठ आयु के महास्थविर थे तथा मुनि मायाराम गण के सर्वाधिक ज्येष्ठ दीक्षा-पर्याय सम्पन्न मुनिराज थे। दिवगंत मुनि श्री के पार्थिव देह का १५ जनवरी को अन्तिम संस्कार किया गया।

जोधपुर–धर्मनिष्ठ सुश्राविका श्रीमती कृष्णाकंवर जी मोदी धर्मपत्नी स्व. श्रीमान

हुकमनाथ जी मोदी का ६० वर्ष की आयु में सागारी संथारा सहित २६ जनवरी २००३ रविवार को निधन हो गया। आप रत्नवंश की समर्पित, कर्त्तव्यनिष्ठ, धर्मपरायण एवं तपस्विनी श्राविका थी। गत ५० वर्षों से रात्रि में चौविहार त्याग, नवकारसी करने के साथ सामायिक व माला में अधिकांश समय व्यतीत करती थीं। अठाई एवं तीन वर्षीतप का भी इन्होंने आराधन किया। आप संत-सतियों के दर्शन में तत्पर रहती थीं। सरलहृदया महासती श्री सायरकंवरजी म. सा. की सुशिष्या व्याख्यात्री महासती श्री शान्तिकंवरजी म.सा. ने इन्हें अन्तिम मांगलिक पाठ श्रवण कराया। आपकी परमाराध्य महामहिम आचार्य भगवन्त पूज्य श्री हस्तीमल जी म.सा. एवं उनके पट्टधर परमश्रद्धेय आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा., परम श्रद्धेय उपाध्यायप्रवर पं.रत्न श्री मानचन्द्र जी म.सा. आदि संत-सतीवृन्द के प्रति अनन्य आस्था और अगाध भक्ति थी। आप अपने पीछे धर्मनिष्ठ पुत्र-पुत्रियाँ, पौत्र-पौत्रियाँ, दौहित्र-दौहित्रियाँ, प्रदोहित्र-प्रदोहित्री सहित भरापूरा परिवार छोड़ कर गई हैं।

जयपुर— सुश्राविका श्रीमती सरदारदेवी जी हीरावत धर्मपत्नी स्व. श्री उत्तमचन्द जी हीरावत का २ जनवरी २००३ को आकस्मिक निधन हो गया। आप नियमित रूप से सामायिक एवं धर्माराधन करती थीं। आपके जीवन पर आचार्य भगवन्त पूज्य श्री हस्तीमल जी म.सा. एवं आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. का विशेष प्रभाव था। आप सन्त-सतियों की सेवा में सदैव अग्रणी रहती थीं तथा संघ एवं समाज के लिए समर्पित थीं। आपके श्रद्धानिष्ठ सुपुत्र श्री अशोक जी हीरावत प्रमुख स्वाध्यायी हैं तथा पर्युषण पर्व में नियमित रूप से बाहर जाकर अपनी सेवाओं से समाज को लाभान्वित करते हैं। हीरावत परिवार की भक्ति, धर्मनिष्ठा, कर्मठ सेवाभावना आदि सराहनीय हैं।

रसीदपुर-सुश्रावक श्री प्रेमचन्द जी जैन सुपुत्र स्व. श्री रज्जुलाल जी जैन का १६ जनवरी २००३ को स्वर्गवास हो गया। आप वरिष्ठ, समर्पित एवं चिन्तनशील स्वाध्यायी थे। आप सरलस्वभावी, कर्त्तव्यपरायण एवं मृदुभाषी श्रावक थे। आपने अनेक क्षेत्रीय एवं स्थानीय शिविरों में अध्यापन कार्य भी किया है। रसीदपुर में धार्मिक पाठशाला संचालन में एवं पल्लीवाल क्षेत्र में प्रचार-प्रसार आदि कार्यक्रमों में विशेष सेवाएँ प्रदान की है। आपकी परमश्रद्धेय आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा., आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. आदि संत-सतियों के प्रति अनन्य भक्ति एवं अगाढ़ आस्था थी। आप अपने पीछे भरापूरा परिवार छोड़ कर गये है।

अकोला— सुश्रावक श्री बस्तीमल जी बोहरा सुपुत्र स्व. श्री फूलचन्द जी

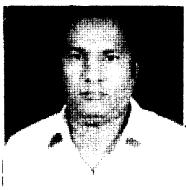

चुन्नीलाल जी बोहरा, पीपाड़ वाले का ५८ वर्ष की आयु में १५ नवम्बर २००२ को ब्रेन हेमरेज के कारण नागपुर में स्वर्गवास हो गया। आप सरलस्वभावी, कर्त्तव्यपरायण एवं मृदुभाषी श्रावक थे तथा नियमित रूप से सामायिक करते थे। आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा. एवं आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के जीवन का आप पर विशेष प्रभाव था। ***-मनीष-विशाल बोहरा, मुम्बई***

उदयपुर—श्रीमती बदामबाई धर्मपत्नी स्व. श्री गोठीलाल जी नलवाया (कानोड़

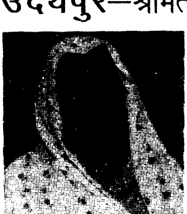

वाले) का ६३ वर्ष की परिपक्व वय में २६ दिसम्बर २००२ को देहावसान हो गया। आप धर्मनिष्ठ, सरलस्वभावी, मृदुभाषी एवं सादगीप्रिय श्राविका थी। प्रतिदिन सामायिक, प्रतिक्रमण आदि धार्मिक क्रियाओं का आराधन करने वाली श्राविका के रात्रि में चौविहार का प्रत्याख्यान रहता था। आप अपने पीछे सुपुत्र श्री शान्तिलाल जी नलवाया आदि का संस्कारित भरापूरा परिवार छोड़कर गई हैं।

जयपुर— सुश्राविका श्रीमती सीतादेवी जी बोथरा धर्मपत्नी स्व. श्री जीवनलाल जी बोथरा का ७ जनवरी २००३ को संथारापूर्वक स्वर्गगमन हो गया। धर्मनिष्ठ सुज्ञ श्राविका श्रीमती बोथरा की अपने धर्माचार्य धर्मगुरु आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.

सा. एवं आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के प्रति अगाध श्रद्धा-भक्ति थी। जीवन में सरलता-सादगी, व्यवहार में नम्रता-मृदुता उनके विशेष गुण थे। आप प्रतिदिन सामायिक-स्वाध्याय करने के साथ त्याग-तप के प्रति सदैव सजग रहती थीं। परिवारजनों का संथारे के समय सहयोग सराहनीय रहा।

दूनी (टोंक)—सुश्रावक श्री हरकचन्द जी गोखरू का ८३ वर्ष की आयु में १३ जनवरी २००३ को स्वर्गवास हो गया। आप सरलस्वभावी, विनम्र, अनुशासनप्रिय, धर्मप्रेमी श्रावक थे। आप सामायिक, प्रतिक्रमण, प्रार्थना एवं पूज्य संत-सतियों के दर्शन-व्याख्यान आदि कार्यक्रमों में नियमित रूप से भाग लेते थे। आपके रात्रि-भोजन के त्याग थे तथा विगत ३५ वर्षों से रविवार को आयम्बिल-तप करते थे। त्यागमय जीवन जीना आपकी जीवन शैली थी। आप कई वर्षों से पर्युषण पर्व में तेले की तपस्या करते थे। आप अपने पीछे सुपुत्र श्री प्रकाशचन्दजी, मूलचन्द जी(सी.ए.) एवं प्रदीपकुमार जी का संस्कारित परिवार छोड़कर गए हैं।

जयपुर— सुश्राविका श्रीमती शान्तादेवी जी सुकलेचा धर्मपत्नी स्व.श्री धरमचन्द जी सुकलेचा का ८ जनवरी २००३ को देहावसान हो गया। आप धर्मनिष्ठ, सरल, कर्त्तव्यपरायण एवं समर्पित श्राविका थी। देव, गुरु एवं धर्म के प्रति आप पूर्णतः समर्पित थी।

जयपुर—सुश्रावक श्री उत्तमचन्द जी ढड्ढा का २ जनवरी २००३ को निधन हो गया। आपके जीवन पर आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा. एवं आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. का विशेष प्रभाव था। आप सामायिक-स्वाध्याय एवं व्रत-नियमों के प्रति आस्थावान एवं गरिमामय व्यक्तित्व के धनी थे। आप संस्कारशील एवं धर्मनिष्ठ परिवार छोड़कर गए हैं।

मथानिया—स्थानीय संघ के अध्यक्ष तत्त्वज्ञ सुश्रावक श्री त्रिलोकचन्द जी गिड़िया का १६ जनवरी २००३ को समाधिभावों में स्वर्गवास हो गया। आप मृदुभाषी, मिलनसार एवं धार्मिक व्यक्तित्व के धनी थे। आप अपने पीछे संस्कारित परिवार छोड़ कर गए हैं। *-सुभाष छाजेड़*

उपर्युक्त दिवंगत आत्माओं के प्रति सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जिनवाणी, अ.भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए उनके परिवारजनों के प्रति गहरी संवेदना व्यक्त करता है।

संशोधन

जिनवाणी, दिसम्बर 2002 के अंक में पृष्ठ 39 पर महासती श्री हरकंवर जी म.सा. का प्रवर्तिनी के रूप में उल्लेख सम्पादक की भूल से हो गया था। वे वयोवृद्ध स्थविरा महासती थी। रत्नवंश में अब तक तीन प्रवर्तिनी महासती हुई हैं–1.महासती श्री सुन्दरकंवर जी म.सा.,2.महासती श्री बदनकंवर जी म.सा.,3.महासती श्री लाडकंवर जी म.सा.

–सम्पादक

साभार-प्राप्ति-स्वीकार

500/-रुपये जिनवाणी पत्रिका की आजीवन-सदस्यता हेतु प्रत्येक

9052 Shri Ashok Kumar Ji Mutha, Chennai (T.N.)
9053 Shri Ashok Kumar Ji Mehta Chennai (T.N.)
9054 Shri Padamchand Ji Choudhary, Chennai (T.N.)
9055 श्रीमती प्रभा जी जैन, शुजालपुरसिटी (म.प्र.)
9056 श्री पदमकुमार जी बोगावत, चित्तौड़गढ़ (राज.)
9057 श्री चिन्तन जी मेहता (एम.ई.) नागपुर (महा.)
9058 श्री भंवरलाल जी मेहता, बैंगलोर (कर्नाटक)
9059 श्री नेमीचन्द जी शेषमल जी पालरेचा, वापी(गुजरात)
9060 श्री सुनीलकुमार जी सज्जनराज जी सिंघवी, भिलाई, वलसाड़ (गुजरात)
9061 श्री मोहनलाल जी बच्छराज जी कर्णावट, सावटा, ठाणे(महा.)
9062 श्री अनिल कुमार जी चोरड़िया, डहाणू, ठाणे (महा.)
9063 श्री हर्षकुमार हरकचंद जी कांकरिया, बोर्डो, ठाणे (महा.)
9064 श्री हितेश जी मांगीलाल जी नाहर, सावटा, ठाणे (महा.)

जिनवाणी को साभार-प्राप्त

50000/-गुप्तदान, चेन्नई, जिनवाणी के 100 आजीवन सदस्य बनाने हेतु आर्थिक सहयोग सधन्यवाद प्राप्त।

5100/- श्री अशोक कुमार जी हीरावत, जयपुर, पूजनीय माताश्री श्रीमती सरदारदेवी जी धर्मपत्नी स्व. श्री उत्तमचन्द जी हीरावत का दिनांक 2 जनवरी 2003 को स्वर्गवास होने पर उनकी पुण्यस्मृति में भेंट।

2100/- श्री कमल कुमार जी, प्रसन्नकुमार जी, अभय कुमार जी ढड्ढा जयपुर, श्रीमान उत्तमचन्द जी सा ढड्ढा का दिनांक 2.1.2003 को स्वर्गवास हो जाने पर उनकी पुण्य स्मृति में भेंट।

1100/- श्री सम्पतराज जी धारीवाल, पाली मारवाड़(राज.), अपनी आत्मजा सौ.कां. सपना का शुभ विवाह चि. अल्पेश पुत्र श्री बाबूलाल जी मेहता, मुम्बई वालों के साथ 29.01.2003 को सानन्द सम्पन्न होने की खुशी में सप्रेम भेंट।

501/- श्री प्रकाशचन्दजी, मूलचन्दजी, प्रदीपकुमारजी गोखरू, दूनी, पूज्य पिताजी श्री हरकचन्द जी गोखरू, दूनी का दिनांक 13.1.2003 को स्वर्गवास होने पर उनकी पुण्यस्मृति में सप्रेम भेंट।

501/- श्रीमती अकलकंवर जी एवं श्री सोलेश्वरनाथ जी मोदी, जोधपुर, अपनी सुपौत्री मीनल (सुपुत्री श्री जिनेन्द्र जी एवं श्रीमती मधु जी) का शुभविवाह चि. अमरीश (सुपुत्र श्री महेन्द्र जी एवं श्रीमती सुधा जी सिंघवी) के साथ दिनांक 27.12.2002 को सम्पन्न होने की खुशी में।

501/- श्री सुरेन्द्रमल जी कमला जी सिंघवी, जोधपुर, अपने सुपौत्र शुभम के जन्मोत्सव पर सप्रेम भेंट।

501/- श्री शान्तिलाल जी एवं श्रीमती उजास जी डाकलिया, जोधपुर, अपनी सुपुत्री सौ. कां. निरुपा डाकलिया का चि. कपिल पटवा (सुपुत्र श्री मेघराज जी पटवा) के साथ पाणिग्रहण संस्कार होने के उपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

501/- श्री ज्ञानेश कुमार जी नेमीकुमार जी मुणोत, नवसारी, परमश्रद्धेय आचार्यप्रवर

1008 श्री हीराचन्द्र जी म.सा. आदि ठाणा के नवसारी आगमन की खुशी में सप्रेम भेंट।

500/– श्री स्थानकवासी जैन संघ, मेट्टुपालयम(तमिलनाडु), संघाध्यक्ष श्री भंवरलाल जी सांखला की पुण्य स्मृति में भेंट।

500/– श्री प्रदीपकुमार जी ललवाणी, नागौर, नये गृहप्रवेश की खुशी में सप्रेम भेंट।

500/– श्री मनीष जी विशाल जी बोहरा, मुम्बई, श्रीमान बस्तीमल जी बोहरा, सुपुत्र स्व. श्री फूलचन्द जी चुन्नीलाल जी बोहरा (पीपाड़ वाले) का 58 वर्ष की आयु में दिनांक 15 नवम्बर 2002 को स्वर्गवास होने पर, उनकी पुण्य स्मृति में भेंट।

500/– श्री पुखराज जी प्रकाशचन्द जी बाघमार, चेन्नई, परमश्रद्धेय आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा. के 93वें जन्म–दिवस के उपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

500/– डॉ. राजेश जी मेहता, जोधपुर, पूज्य पिताजी श्री रतनराज जी मेहता की पावन स्मृति में सप्रेम भेंट।

251/– श्री सम्पतमल जी अरूणकुमार जी चोरड़िया, चेन्नई, आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा. के जन्मोत्सव के दिन चेन्नई में "श्री जैन रत्न श्रावक मण्डल" द्वारा नये स्थानक के उद्घाटन की खुशी में सप्रेम भेंट।

250/– श्री जवाहरलाल जी बाघमार, चेन्नई, आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा. के 93वीं जन्म जयन्ती के उपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

101/– श्री पूनमचन्द जी जामड़, जयपुर, सुपौत्री सौ. कां. प्रज्ञा एवं सौ. कां. अंजना का शुभ विवाह दिनांक 12.12.2002 को सानन्द सम्पन्न होने की खुशी में सप्रेम भेंट।

61/– श्री महेन्द्र जी तिल्लानी, रतलाम, जिनवाणी सप्रेम भेंट।

51/– श्रीमती शशिकान्ता जी जैन, भरतपुर, स्व. श्रीमान मूलचन्दजी जैन की प्रथम पुण्य तिथि दिनांक 1.1.2003 पर भेंट।

51/– श्री प्रदीप कुमार जी ललवाणी, नागौर (राज.), नव गृहप्रवेश की खुशी में।

जीव-दया हेतु साभार-प्राप्त

501/– श्री देवेन्द्रनाथ जी मोदी, जोधपुर, पूजनीया माताजी श्रीमती कृष्णाकंवरजी (पत्नी स्व. श्रीमान हुकमनाथ जी मोदी) 26.1.03 को सागारी संथारे सहित स्वर्गवास होने पर पुण्यात्मा को चिर शांति की कामना सहित।

101/– श्री देवेन्द्रनाथ जी मोदी, जोधपुर, पिताश्री हुकमनाथ सा मोदी की दिनांक 15.2.03 को 21वीं पुण्यतिथि पर स्मरणांजलि स्वरूप भेंट।

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर को साभार-प्राप्त

200000/–श्री गजेन्द्र निधि, मुम्बई से सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल को आर्थिक सहयोग।

साहित्य प्रकाशन हेतु साभार-प्राप्त

60000/–श्री एस. प्यारेलाल जी कोठारी (जैन), चेन्नई से जैन धर्म का मौलिक इतिहास भाग–1 व भाग–4 के प्रकाशन में आर्थिक सहयोग प्राप्त।

श्री स्थानकवासी स्वाध्याय संघ, जोधपुर को साभार-प्राप्त

1100/– श्री सम्पतराजजी धारीवाल, पाली–मारवाड़(राज.), अपनी आत्मजा सौ.कां. सपना का शुभ विवाह चि. अल्पेश पुत्र श्री बाबूलाल जी मेहता, मुम्बई वालों के साथ 29.01.2003 को सानन्द सम्पन्न होने की खुशी में सप्रेम भेंट।

201/– श्री केवलचन्द जी ताराचन्द जी सिंघवी, हैदराबाद, श्रद्धेय श्री गौतममुनि जी म.सा. आदि ठाणा 2 के दर्शनों के उपलक्ष्य में।

पर्युषण सहायता

500/– श्री प्रदीप जी धारीवाल, पाली।
501/– श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, बजरिया।

स्वाध्याय संघ शाखा बजरिया को साभार-प्राप्त

251/– श्री. मोतीलाल जी चौथमल जी बोहरा, बजरिया, सवाईमाधोपुर, चि. शैलेन्द्र के विवाहोपलक्ष्य में।
201/– श्री अध्यक्ष जी, श्री श्वे.स्था. जैन श्रावक संघ, बाबई।
101/– श्री महेन्द्रकुमार जी जैन, अलीगढ़ वाले, सवाईमाधोपुर, आचार्य श्री हीराचन्द्र जी म.सा. ठाणा 8 के मुम्बई चातुर्मास में दर्शनों की खुशी में।

जिनवाणी पर अभिमत

जिनवाणी के नवम्बर २००२ के अंक में आपका संपादकीय ''संघ-समर्पण'' पढ़कर विगत ३-४ वर्षों से मेरे मस्तिष्क में चल रही ऊहापोह का समाधान हुआ है। इसके लिये कृपया मेरा हार्दिक साधुवाद स्वीकार करें। मेरी मान्यता है कि विभिन्न सम्प्रदायों के अपने-अपने संगठन बने हैं, वे भगवान महावीर द्वारा प्रतिपादित संघ के भाग हो ही नहीं सकते। भगवान महावीर ने कभी भी श्रावक संघ अथवा श्रमण संघ नाम से पहचान नहीं दी। जैसाकि आपके संपादकीय में उल्लिखित है साधु, साध्वी, श्रावक, श्राविका ये चारों तीर्थों के समूह का नाम 'संघ' है। इन चारों तीर्थों को संघ रूप नाम देकर नंदी सूत्र में वन्दना की गई है। आपके इस चिन्तन को समाज के कर्णधार (ठेकेदार) किस रूप में लेते हैं, इसकी व्यग्रता से प्रतीक्षा है।

दिनांक 23.01.2003 **मनोहरलाल जैन, धार (म.प्र.)**

आपके सम्पादकत्व में जिनवाणी पत्रिका का जो मासिक प्रकाशन हो रहा है वह निश्चय ही सराहनीय एवं रोचकता से परिपूर्ण है। पत्रिका में प्रकाशित प्रत्येक लेख/कविता/निबंध बहुत ही सारगर्भित भाव प्रधान एवं रोचकता पूर्ण है।

दिनांक 30.12.2003 **प्रकाशचन्द लोढ़ा, जयपुर**

नववर्ष २००३ के उपलक्ष्य में आपकी मंगलमनीषा पूर्वक जिनवाणी का हीरक जयन्ती अंक प्राप्त कर आपके सम्पादकीय में जिनवाणी का पचास वर्षीय इतिहास पढ़ने जैसी अनुभूति हुई। आपके सम्पादकीय सदैव पाठक के सोच को एक नई दिशा प्रदान करते हैं।

जिनवाणी का मैं एक पुराना पचास वर्षीय पाठक हूँ। इस दौरान मैंने सदैव नूतनता के साथ चिंतन की गहराइयों का अनुभव किया है। परमश्रद्धेय आदरणीय डाक्टर साहब श्री नरेन्द्र जी भानावत की तो बहुत याद आती है, परन्तु आपकी लगन ने यह सिद्ध कर दिया है कि जिनवाणी को एक अद्वितीय सम्पादक का उत्तराधिकारी मिला है जो २१वीं शताब्दी के उज्ज्वल भविष्य का द्योतक है।

जिनवाणी की यह सदैव विशेषता रही है कि इसके सभी पाठक इसे हमेशा आद्योपात पढ़ते हैं, संग्रह करके रखते हैं तथा पढ़ने के बाद अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त किए बिना रहा नहीं जाता है। **डॉ. लक्ष्मीचन्द जैन, छोटी कसरावद (म.प्र.)**

JAI MAHAVEER

JAI GURU HASTI

JAI GURU HIRAMAN

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

LIVE & LET LIVE

Lord Mahaveer

With Best Compliments from

Prithvi Exchange

A 100% Money Changer

A DIVISION OF PRITHVI SECURITIES LIMITED

Regd. Office : 33, Montieth Road, Egmore, Chennai-600 008, Ph : 855 3185/3059. Website : www.prithvifx.com

CHENNAI	BANGALORE	PANJIM GOA
044-8553185	080-5327812	0832-231190
044-8553059	080-5327813	0832-420675

P. DELICHAND KAVAD

SURESH KAVAD

RAVINDRA KAVAD

NAVARATHAN KAVAD

ASHOK KAVAD

158, Trunk Road, Poonamallee, Chennai-600 056.

Ph : 044-627 3165, 627 4165

हमारी प्रार्थना के केन्द्र में यदि वीतराग होंगे तो निश्चित रूप से हमारी मनोवृत्तियों में प्रशस्तता और उच्च स्थिति आयेगी।

-आचार्य श्री हस्ती

With Best Compliments From :

JIN GEMS

DIAMONDS, PRECIOUS & SEMI PRECIOUS STONES

12th Floor, Flat 'C'
Mass Resources Dev. Bldg.
12, Humphrey's Avenue
T.S.T. Kowloon, Hongkong
✆ 23671373, Fax : 23671511
MOBILE : 94327311, 92594051
E-mail : jingems@ctimail.com

Rajendra Daga

JAI MAHAVEER JAI GURU HASTI

With Best Compliments From :

P. MANGILAL HARISH KUMAR KAVAD

GURU HASTI GOLD PALACE

No. 5, CAR STREET, POONAMALLEE
CHENNAI-600 056
PHONE : 6272609

BANKERS : PHONE / 6272906

No. 5 A, CAR STREET,
POONAMALLEE
CHENNAI-600 056

Gurudev

SURANA

Financial Corporation (India) Limited

Group of Surana

Since 1971

A Multi Faceted Finance Company
With Fraternity Feel, Holding Hands
With Customers in Their Success

Just Contact For

- **Hire Purchase**
- **Leasing**
- **Bills Discounting**
- **Foreign Exchange**

Invites Deposits from Public

Call

Phone : 8525596 (6 Lines) Fax : 044-8520587
Internet ID : suranaco@md3.vsnl.net.in
Sprint E-mail ID : surana.chh@rmd.sprintrpg.ems.vsnl.net.in
Regd Cum.Corp. H.O.: No. 16, Whites Road, II Floor,
Royapettah, Chennai - 600 014

Branches :

☆ Bangalore ☆ Coimbatore ☆ Ernakulam ☆
☆ Kollidam ☆ New Delhi ☆

शान्ति और समता के लिए न्याय-नीतिपूर्वक धर्म का आचरण ही श्रेयस्कर है।

''आचार्य श्री हस्ती''

With Best Compliments From :

EVERREST GEMS LTD.

12-A-2,CHINA INSURANCE BUILDING,

48, CAMERON ROAD,
T.S.T. KOWLOON
HONG-KONG

TEL : 23681199
FAX : 23671357

Director : Sunil Lunawat
Rajesh Kothari

With Best Compliments From :

धन रोग और शोक दोनों का घर है,
जबकि धर्म रोग और शोक दोनों को
काटने वाला है।

\- आचार्य श्री हस्ती

HIMA GEMS

14-A, KOK-PAH MANSION
58-60, CAMERON ROAD,
T.S.T. KOWLOON
HONG-KONG

Director
HEMANT SANCHETI

कलात्मक गहनोंकी सुवर्ण सृष्टी...
आपके व्यक्तीत्वका सही प्रतिबींब !
सोने चांदीके पारंपारीक एवमं आधुनिक आभुषणोंकी
१८५४ से विश्वसनीय सुवर्ण पेढी...
A HOUSE OF TRUST
RL
GROUP
SINCE 1854
राजमल लखीचंद ™
ज्वेलर्स
१६९, जौहरी बाज़ार, जलगाँव. (मंहाराष्ट्र) फोन: ०२५७-२२६६८१,८२,८३
All major credit cards accepted...
GRACE

आर. एन. आइ. न. 3653/57 डाक पजीयन सख्या JPC/3825/02/2003-05

Home next to everything you need.
And far from everything you don't.

KALPATARU HABITAT
DR. S.S. RAO ROAD, PAREL

- Twin 23 storeyed luxury apartment blocks
- 2 &3 BHK apartments and 4 BHK penthouses
- Swimming pool, clubhouse & gym
- Squash court & tennis court
- Landscaped gardens & modern security systems

KALPATARU RESIDENCY
OPPOSITE CINE PLANET, SION CIRCLE

- Premium 18 storeyed towers with 2 & 3 BHK flats
- Swimming pool, squash court & gym
- Clubhouse, party lounge & landscaped gardens
- Basement and open car parking
- Tower A nearing completion

KARMA KSHETRA
NEAR SHANMUKHANANDA HALL, KING'S CIRCLE

- 25 storeyed tower with 2 wings
- 2 BHK apartments
- Landscaped gardens
- Ample car parking and modern security systems

Centrally located, they are near schools, banks, supermarkets, movie halls... And once you step in, you'll leave the hectic world outside. There'll be just you and a feeling that says, 'Relax, you are home'.

The projects are under construction/nearing completion. For details call 281 7171/282 2679/284 4102.

KALPA-TARU

111, Maker Chambers IV, Nariman Point, Mumbai 400 02
Fax: 204 1548/288 4778. E-mail: sales@kalpataru.com
visit us at www.kalpataru.c

प्रकाशचन्द डागा, मन्त्री-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर की ओर से संजय मित्तल द्वारा दी डायमण्ड प्रिन्टिंग प्रेस, एम.एस.बी. का रास्ता, जौहरी बाजार, जयपुर से मुद्रित एवं प्रकाशचन्द डागा द्वारा प्रकाशित तथा सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, बापू बाजार, जयपुर (राज.) से प्रकाशित। प्रधान सम्पादक डां. धर्मचन्द जैन।